प्रथम अध्याय

'मैत्रेयी पुष्पा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व'

प्रथम अध्याय

मैत्रेयी पुष्पा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

1 व्यक्तित्व :

विषय प्रवेश :- आजादी के संग्राम के समय देश की स्वतंत्रता के लिये जिस प्रकार जंग छेडा गया था उसी प्रकार भारतीय समाज में सदियों से बंदी नारी जाति के मुक्ति के लिये म. जोतिबा फुले, सावित्रीबाई फुले, राजा राममोहन राय, आचार्य दयानंद स्वामी, डॉ.अम्बेडकर जैसे समाज सुधारकों ने स्त्री-उत्थान के लिए भारतीय समाज में जंग छेड दी थी। परिणामस्वरूप सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक नर-नारी समानता की लढाई शुरू हो गई जो वैधानिक थी। आजादी के बाद भारतीय संविधान ने नर-नारी को समान अधिकार प्रदान किये और स्त्री ने भी अपने अधिकार प्राप्ती के लिये अनेक मोर्चे लडे। आज स्त्री धीरे-धीरे सही लडाई जीती जा रही है। पुरुष मानसिकता, रूढि परंपराओं के आडे उसे रोकने की कोशिश में लगा रहा है, जिससे आज भी स्त्री विषयक चिंतन में यथेष्ट परिष्कार नहीं हुआ है। स्त्री अपने भोगे हुए यथार्थ को खुद ही बयान करे तो सही मायने में वह स्त्री जाति के जीवन में बदलाव ला सकती है उसने अगर खुद को बचाकर जिंदगी को प्रस्तुत किया तो आधुनिक युग में भी वह फिर एक बार कैदी (वस्तु) बनने का डर है। इसलिए आज भारतीय समाज में सन 1960 के बाद के लेखिकाओं के साहित्य में स्त्री की जिंदगी और उसका वजूद यथार्थता और सत्यता को लेकर प्रस्तुत होने लगा है। जिसमें कोई छिपाव नहीं है। इन अधुनातन लेखिकाओं में मैत्रेयी पुष्पा का नाम शीर्षस्थ है। मैत्रेयी का साहित्य भारतीय स्त्री की वेदना-पीडा, दर्दभरी आवाज जरूर है परंतु वह आह भरनेवाली स्त्री नहीं तो जागृत होकर अपने उपर होनेवाले अन्याय-अत्याचार का जबाब माँगनेवाली स्त्री की दहाड है। मैत्रेयी के साहित्य के बारे में विजय बहादुर सिंह कहते है - '' 'रतिनाथ की चाची' लिखनेवाले नागार्जुन का भी यह मानना था कि स्त्री होकर ही उसके मन को समझा जा सकता है। मैत्रेयी का समूचा लेखन इसी मन को समझने का प्रयास नहीं, ऐतिहासिक अभियान है। इस मन को वे जिस आधारभूत, अतिपरिचित किंतु मध्यवर्गीय लेखक के लिए अपरिचित बडे फलक पर उठातीं और चित्रित करती हैं, वह हमें जैसे प्रेमचंद और रेणू के बाद के भारतीय उपन्यास का महत्वपूर्ण और आश्वस्तकारी फलक लगता है।''[1] इस तरह भारतीय स्त्री जीवन के समग्र पहलूओं को उजागर करनेवाला साहित्य

---

1. सं. विजय बहादुर सिंह, 'मैत्रेयी पुष्पा : स्मत्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. 8.

मैत्रेयी पुष्पा का साहित्य है जिसमें खुले आसमान में उडने की चाह रखते हुए भी अपने परिवार के लिये समर्पित होते स्त्री जीवन का चित्रण प्रस्तुत होता है। मैत्रेयी के साहित्य के बारे में कृष्णा सोबती कहती है - ''स्वातंत्र्योत्तर भारतीय उपन्यास के हिंदी समय में मैत्रेयी पुष्पा द्वारा प्रस्तुत की गई ग्रामीण समाज की प्रखर अभिव्यक्ति विलक्षण कहलाने की अधिकारी है। जिस अनुभव और कौशल से मैत्रेयी ने देशज गतिविधियों का सामाजिक वृत्तांत बुना है वह आत्म सम्मोहन और आत्मपीडक उपन्यासों के पाठ से उन्हें अलग खड़ा करता है। राष्ट्र के ग्रामीण जीवन से उभरती सामाजिक, राजनीतिक स्थितियाँ, पीढ़ियों और रूढ़ियों के द्वंद्वात्मक पैंतरे मैत्रेयी के लेखन की नई नागरिक चेतना को प्रमाणित करते हैं।''[1] इस तरह आज के आधुनिक बोध से जागृत जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने अधिकार की माँग करनेवाली स्त्री का चित्रण करते हुये उसके अधिकारों से उसे परिचित कराना, जागृत कराना यही उद्देश मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य का रहा है, जिसमें वह गुलाम बनकर नही तो एक इन्सान बनकर अपना जीवन व्यतित करे यही सोच उनके साहित्य का मूलाधार है। स्त्री को उनके अधिकार दिलानेवाली लेखिका के व्यक्तित्व की पहचान उसके साहित्य के माध्यम से ही होती है; उनके व्यक्तित्व एवं जीवन परिचय को जानना नितांत युक्तिसंगत प्रतीत होता है क्योंकि, तभी तो हम उनके साहित्य को गहराई से समझ सकते है।

1. व्यक्तित्व परिचय :-

मैत्रेयी पुष्पा का व्यक्तित्व उनकी आत्मकथा के दो खंड - 1) 'कस्तुरी कुंडल बसै', 2) 'गुडिया भीतर गुडिया' के माध्यम से प्रस्तुत होता है; साथ ही उनके साहित्य में आये स्त्री पात्रों के माध्यम से उनका व्यक्तित्व प्रतिबिंबित होता है। उनके व्यक्तित्व निर्माण में साहय्यक उनकी जीवन स्थिती और परिवेश को जानना आवश्यक है, जिससे उनका साहित्यिक व्यक्तित्व का निर्माण हुआ। मैत्रेयी कहती है - ''मुझे प्रेरणा से पहले अपनी कलम के प्रभाव ने आगे बढ़ाया।''[2]

1.1 जन्मतिथि तथा जन्मस्थान :-

बीसवीं सदी के अंतिम दशक की ख्यातनाम लेखिका मैत्रेयी पुष्पा का जन्म 30 नवंबर 1944 ई. को उत्तरप्रदेश राज्य, अलीगढ जिला - इयलास तहसील के सिकुर्रा गाँव के एक

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्तली, प्र. सं. 2000, पृ. भूमिकासे।
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्तली, प्र. सं. 2010, पृ. 48.

ब्राह्मण परिवार में हुआ। अंग्रेजों के कुर्की-निलामी को झेलते, परंपराओं के साखल से कसा यह गांव रहा है, समय के साथ बदलाव झेलते हुए, कुछ छटपटाता जरूर दिखाई देता है। मध्यमवर्गीय परिवार में जन्मी गांव-परिवार के आर्थिक संघर्ष से जुझते, परिवेश में सर्वसाधारण जीवन बीतानेवाली मैत्रेयी को अपने गांव के प्रति हमेशा लगाव रहा।

भारतीय समाज में आज स्त्री का जन्म शाप माना जाता है, जैसे समाज में स्वतंत्रता पूर्व जन्मी मैत्रेयी का स्वागत नहीं हुआ। बेटी के जन्म के साथ अनेक धारणाएँ रही समाज में उनकी माँ 'कस्तुरी' ने मात्र बेटी के जन्म से अपने आपको गौरवान्वित किया। मैत्रेयी की माँ आधुनिक विचारों की थी जिस समय में बेटी को लेकर समाज में धारणा थी "लडकियाँ धान का पौधा होती है। समय से पहले ही दूसरी ओर रोप देना अच्छा होता है।"[1] बेटी और बेटा में भेदनीती रखने वाले इस समाज में बेटी का स्वागत कभी हुआ ही नहीं। बेटी के जन्म को लेकर और उसके परवरिश में की जानेवाले कोताई को लेकर मैत्रेयी ने अनेक कहानियाँ लिखी है जो उन्होंने अपने जीवन में देखी है। परंतु मैत्रेयी का उसके घर में स्वागत हुआ वह एकलौती संतान रही जो माँ ने उसके पालन, पोषण में कोई कमी नहीं छोडी। अपने बचपन के जीवन के बारे में मैत्रेयी कहती है - "किसी देश के बच्चे गुलाम नहीं होते, हम भी नहीं थे। हमें माँ का दूध मयस्सर था, कपडों की जरूरत न थी। (गांव का बच्चा शर्म-संकोच और जाड़े, गर्मी का दबाव यथाशक्ति नहीं मानता।) खेलने के लिए रेत-धूल थी, जिस पर किसी जमींदार का पहरा न था। रंगीन चूडियों के कंचई टुकडें और मिट्टी के फूटे बर्तनों के लाल-लाल खपरों की कुर्की के लिए आने वाले कारिंदा का भय न था। इसी बिना पर मैंने जन्म से बचपन तक अपने-आप को आजाद समझा।"[2] इस तरह बचपन से अपने आप को आझाद माननेवाली मैत्रेयी पुष्पा का साहित्य भी स्त्री आझादी के विचार-विमर्श का दस्तावेज है।

1.2 नाम :-

मैत्रेयी पुष्पा के नाम की भी एक कहानी है। उनका जन्म नाम पुष्पा हीरालाल पांडेय रहा है। गांव के कुर्की निलामी के डर से गांव लौटे पिताजी हीरालाल जब मोतीझरा बीमारी के शिकार होकर मरण द्वार पर खडे हो गये तो हमेशा पत्नी पर गुस्सा करनेवाले हीरालाल के मन में पत्नी और बेटी के प्रति प्यार उमड़ आया। वह लेखिका को प्यार से मैत्रेयी कहकर

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्तली, प्र. सं. 2000, पृ. 18.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'गोमा हंसती है', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्तली, प्र. सं. 1998, पृ. 7-8.

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.

पुकारते थे। हीरालाल ने अंतिम समय में अपनी डेढ़साल की नन्ही बेटी को अंत की मुनादी भरी रूंघी आवाज में मै--त्रे---यी-- कहकर पुकारा था। 'मैत्रेयी' का अर्थ 'सानवान', 'सच्चा दोस्त' है। परंतु मैत्रेयी को माँ कस्तुरी (माँ) उन्हे प्यार से लाली कहकर ही पुकारती थी। परिणामस्वरूप; मैत्रेयी और पुष्पा ये दोनों नाम पीछे रह गये। शादी के बाद तो ससुराल में उनके पति को मंटी कहते थे तो मैत्रेयी को 'मंटी की बहू' कहकर ही पुकारा जाता था, या मिसेज शर्मा। अपने साहित्यिक नाम 'मैत्रेयी पुष्पा' को धारण करने के बारे में मैत्रेयी कहती है - ''बरसों से नहीं बुलाया किसी ने नाम से मुझे। कभी मायके जाऊँ तो वहाँ वाले बुलाते हैं। कहा, नहीं-नहीं। तो मुझे याद आया कि मैं तो मैत्रेयी थी। हां-हां। मेरे जन्म का नाम मैत्रेयी है, जो पंडित रखता है न दस दिन के बच्चे का नाम। मेरा नाम मैत्रेयी है। गाँव में किसी से कहना नहीं आया तो घर में पुष्पा-पुष्पा कहने लगे। तो मैंने सोचा अब ये दोनों नाम मिला दिए जाएँ, तो मैत्रेयी पुष्पा हुआ।''[1] इस तरह मैत्रेयी ने अपने पिताजी और गांव की याद को कायम रखने के लिए अपना लेखकीय नाम 'मैत्रेयी पुष्पा' धारण किया दिखाई देता है।

1.3 पारिवारिक पृष्ठभूमि :-

मैत्रेयी के ब्याह रचाने के समय जब वर संशोधन शुरू हो जाता है, तब पाठक का रिश्ता आने पर मैत्रेयी के गोत्र के बारे में बताते हुए भगवानदास सेठ कहते है - ''यार तुम तो मथुरा के चौबों को भी मात कर रहे हो। चलो वंशावली सुन लो - मेवाराम घर जॅवाई आए थे गांव में। उनका बेटा था हीरालाल। हीरालाल की एक ही बेटी मैत्रेयी। इसके चश्मदीद गवाह हम नहीं, पुरा गांव है। और कुछ?''[2] सिकुर्रा गांव के घर जँवाई मेवाराम ब्राह्मण परिवार पांडेय के एकलौते पुत्र हीरालाल और कस्तुरी की बेटी थी 'मैत्रेयी'। एक समय था मैत्रेयी का परिवार अड़तालीस बीघे खेती का मालीक था, उनकी बनगज गांव के जाट या यादवों से भिन्न न थी। अंग्रेजी हुकमत का शिकार बनता रहा उनका परिवार बच तो निकला परंतु आगे चलकर रिश्तेदारों की नजर खेती पर ही रही। माँ और उसके भाई को लड़ते-झगड़ते देखा है मैत्रेयी ने और उसके शादी के रिश्ते बनते बिगडने का कारण खेती ही रहा था। मैत्रेयी को अपने गांव और खेती से बचपन से ही लगाव रहा जिस कारण माँ कस्तूरी के गुजर जाने पर रोते न बैठते हुये मैत्रेयी ने वकिलों से बात करके तुरंत खेती अपने नाम करा ली और आज

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 59.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 74.

उनका खेती ही मुख्य व्यवसाय है। खेतों के सब कामों से वह परिचित है। और किसान संस्कृति को संजोए रखना उनके साहित्य का प्रयास रहा दिखाई देता है। अपने गांव, खेती के बारे में वह कहती है - ''गांव मेरा यथार्थ और नॉस्टाल्जिया दोनों है। खेत ही खेत। मैं ट्रेक्टर चला रही हूँ। चारा काट रही हूँ। मजदूरों से झगड रही हूँ। इसलिए न अलीगढ़, न दिल्ली, मैं तो अपने गांव की हूँ। यहाँ लोगों ने मुझे बदलना चाहा। कई बार पति का दबाव भी पड़ा कि पोशाक बदल लो, बालों का स्टाइल बदल लो। मैंने कहा, ये सब बदल भी लूँ तो मन कैसे बदलूँ? गांव मेरे भीतर बैठा है।''[1] इस तरह अपने जीवन के पहले बीस बरस गांव में बीताये मैत्रेयी पुष्पा ने अपने गांव-जमीन को अपने साहित्य में शब्दबद्ध किया है।

1.4 पिताजी :-

मैत्रेयी के पिताजी पंडित हिरालाल किसानी परिवार से होने के कारण उन्हें हमेशा अंग्रजों के कुर्की-निलामी का सामना करना पडा। परंतु स्वाभिमानी हिरालाल शोषण के खिलाफ विद्रोह करते थे जो उन्हें कोडे भी पडे थे। अपने पिताजी के बारे में मैत्रेयी पुष्पा 'गोमा हँसती है' इस कहानी संग्रह में 'अपने समय के संदर्भ में' कहती है - ''मेरे पिता जमींदार के विरुद्ध खड़े होकर कोड़ों की मार मारे गये। उनका अपराध था गरीब होकर स्वाभिमान से जीना। वे लगान न देने के कसुरवार थे, सख्त सजा के पात्र थे। ऐसे ही दंडित समूह गाँव कहलाता था या गाँव का दूसरा नाम था दरिद्रता और लाचारी।''[2] लाचारी को ठुकराकर गांव से दूर रहे हिरालाल को अपने बेटी के प्रति प्यार था। गांव आने पर अपनी मैत्रेयी का वह खयाल रखते थे अपने पत्नी को बेटी के संबंध में खुर्जावाले पंडीत से कहीं भविष्यवाणी बार-बार सुनाते थे - ''यह हमारी बेटी, जब इसका जन्म हुआ, ग्रह-नक्षत्रों ने रास्ता दिया। देवता और ऋद्धि-सिद्धी साथ हों लिये। पंडितजी ने यहीं कहा था न? और यही हमने देखा, हमारे घर में अन और दूध कि सारे गांव में अमन चैन। मैत्रेयी आई है हमारे घर।''[3] इस तरह अपने बेटी से प्यार करनेवाले हीरालाल की मृत्यू मोतीझरा के बीमारी के कारण हुई। जब मैत्रेयी अठारह माह की थी। उसके बाद उसका लालन-पालन माँ कस्तुरी ने ही किया जो उसके जीवन का अभिन्न अंग बनकर रह गई।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 11.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'गोमा हंसती है', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 1998, पृ. 8.
3. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 24.

1.5 माताजी :-

शिक्षा को स्त्री मुक्ति का द्वार माननेवाली आधुनिक विचार की नारी 'कस्तुरी' मैत्रेयी की माँ थी। विधवा जीवन जीते हुये स्त्री को उठानेवाले संघर्ष से दो हाथ करनेवाली समाज में अपना अलग अस्तित्व निर्माण करनेवाली कस्तुरी की बेटी मैत्रेयी पर अपने माँ के व्यक्तित्व का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। मैत्रेयी के व्यक्तित्व को जानना हो तो माँ कस्तुरी के चरित्र को जानना आवश्यक है, जिससे कस्तुरी के स्वभाव की विशेषता दृष्टिगोचर होती है -

अ) शिक्षा का महत्व जाननेवाली - कस्तुरी ने शिक्षा को स्त्री मुक्ति का द्वार माना है। बचपन से 'सती रेशम कुँवर की कहानी' पढने वाली कस्तुरी को शादी से डर लगता था। बेटी होने के कारण कस्तुरी हमेशा परिवार को एक विपदा लगी, हमेशा धिक्कार के तूफान में घिरी रही। माँ का विरोध रहते हुये भी कस्तुरी चोरी-छुपे पढ़ती रही। 'रेशम कुँवर सती' की किताब पढ़ी कस्तुरी को शादी से हमेशा भय रहा। सोलह वर्ष की हुई कस्तुरी शादी से इन्कार करने लगी। अंग्रेजी हुकूमत के चलते कुर्की-निलामी की नौबत आने पर माँ ने आठसौ रुपयों के ऐवज में अठ्ठाईस वर्षीय हीरालाल से ब्याह दिया और लगान चुकाकर अपने बेटों को जमींदार के चंगुल से मुक्त किया था। ससुराल आने पर गांववालों में कुर्की-नीलामी का वही डर पाया जिससे उसके पति भी उसे छोडकर भाग गए। पति के भाग जाने पर कस्तुरी को अपना घर-परिवार चलाने के लिये शिक्षा काम आई, उसने जमींदार के घर जाकर पोथी-पुरान पढ़कर घर चलाया था। पढ़ाई ही मेरा भला कर सकती है यह बात कस्तुरी ने दिमाग में बसाली और वह गांव-समाज की मर्यादाओं का उल्लंघन करके पडोसी गांव के स्कूल में पढ़ने जाने लगी। समाज भला-बुरा सुनाता रहा परंतु, ससुर मेवाराम ने उसे साथ दिया। आखिर शिक्षा हासिल कर कस्तुरी ने ग्रामसेविका की नौकरी प्राप्त की। आजादी के समय में जहाँ स्त्री शिक्षा का प्रचार-प्रसार हो रहा था उस समय शिक्षा हासिल कर नौकरी करना कस्तुरी के निडर व्यक्तित्व का परिचय देता है।

आ) महिला मंगल योजना में नौकरी और समाजसेवा :- शिक्षा को स्त्री मुक्ती का द्वार माननेवाली कस्तुरी ने महिला मंगल योजना में जब नौकरी करना प्रारंभ किया तब नौकरी करना और पैसे कमाना यह उसका उद्देश्य नहीं था बल्कि, जिस गांव में जाये वहाँ के स्त्रियों को अपने विचारों से प्रभावित करती उन्हें अन्याय-अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने के लिये

बल देती। समय की पाबंद कस्तुरी ने काम में कभी कोताई नहीं की छोटी उम्र की मैत्रेयी को छोडकर वह गांव-गांव महिला मंगल योजना काम करती रही। स्त्री जीवन के उद्धार को अपने जीवन का महत्वपूर्ण ध्येय मानती दिखाई देती है।

इ) कस्तुरी स्वाभिमानी स्त्री :- मैत्रेयी जी की माँ 'कस्तुरी' अत्यंत स्वाभिमानी स्त्री रही है। पति के मृत्यू के बाद पोथी-पुराण पढ़कर घर चलाने वाली यह स्त्री आगे अपनी बेटी की जिंदगी के लिये शिक्षा का अस्त्र अपना कर शिक्षित होकर नौकरी करनेवाली कस्तुरी ने पैसे के लिये कभी दुसरों के सामने हाथ नहीं फैलाये। अपने तरीके से अपना जीवन उन्नत करने का प्रयास वह करती रही और यही सीख वह मैत्रेयी को बार-बार देती रहती है। जीवन में आये कटू प्रसंग को भूलकर भविष्य के बारे में सोचने हिमायत रखनेवाली कस्तुरी स्वाभिमानी, संयत, साहसी और उत्साह, प्रेम इन गुणों से संपन्न थी परिणामस्वरूप; गांव के लोग भी उसका आदर करना सीख गये थे।

ई) बेटी को लेकर विचार - कस्तुरी के जन्म पर उसे घरवालों ने आपत्ती माना था। माँ को वह अपदा लगी थी - "यह सतमासी जबजनमी थी, जब बड़ा बेटा मरा था। सत्यानाशिनी का जन्म ही जंजाल की तरह आया।"[1] परंतु कस्तुरी ने जब बेटी 'मैत्रेयी' को जन्म दिया तो उसने अपने बेटी का उत्साह से स्वागत किया था। बेटी होने पर समाज के ताने उसने भी बुने थे उनका संबंधी चरणसिंह जी ने कहा था - "बेटी होते बुरी, बेटी जाते बुरी। बेटा जाये खुशी, बेटा ब्याहे खुयी।"[2] जिस समाज में बेटी का जन्म अपशकुन माना जाता था उस समाज में अपनी बेटी को नकार ने पर कस्तुरी को आश्चर्य नहीं हुआ था, परंतु अपनी बेटी मैत्रेयी को शिक्षा देकर उसकी पहचान बनाना उन्होंने अपना जीवन माना था। बेटी को शिक्षा देकर उज्वल भविष्य प्रदान करना यही विचार लेकर खुद नौकरी करनेवाली कस्तुरी अपनी बेटी को शिक्षा के लिये अलग-अलग जगह भेजती रही। माँ ने जिस विश्वास से मैत्रेयी को बडा किया था वही विश्वास मैत्रेयी को अपनी तीनों बेटियों को बडा करते हुये काम आया और उन्होंने अपनी तीनों बेटियों को डॉक्टर बनाया यह माँ की ही 'प्रेरणा' थी। मैत्रेयी जब माँ 'कस्तुरी' से कहती है कि मेरी शादी करा दो तो उसे बडा आचरज होता है। वह मैत्रेयी को समझाती रहती शादी ही स्त्री के मुक्ती के अंतिम द्वार नहीं है शिक्षा का महत्व उसके लिये सबसे

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 12.
2. वही, पृ. 74.

महत्वपूर्ण स्थान रखता था जो मैत्रेयी के शादी के बाद भी ससुराल जाते बेटी को किताबे साथ देकर पीएच. डी. की उपाधी प्राप्त करने की बात कस्तुरी करती है। इसतरह आदर्शवादी विचारों की कस्तुरी आगे चलकर मैत्रेयी के जीवन की प्रेरणा स्थल रही दिखाई देती है।

उ) **'दहेज' प्रथा की विरोधी** - कस्तुरी 'दहेज' देना और लेना दोनों के विरुद्ध थी। क्योंकि छोटी उम्र में उसकी माँ ने आठ सौ रुपयों के लिये इच्छा के विरुद्ध कस्तुरी का ब्याह हीरालाल से कर दिया था। कस्तुरी ने हमेशा 'दहेज' प्रथा का विरोध किया, अपनी बेटी मैत्रेयी की शादी तय करते समय 'दहेज' न लेनेवाले वर पक्ष को ढूंढती रही थी और जिससे रिश्ते पर रिश्ते बिघड़ते चले जा रहे थे। शादी के लिये उत्सुक मैत्रेयी को अपनी माँ पर गुस्सा आने लगा था। मैत्रेयी पुष्पा कहती है - "माँ के लिए तो ब्याह ही कुरीतियों में शामिल था, दहेज का खुंखार चलन और आ कुदा अब उसके द्वारा किया गया सम्मान और रखी हुई श्रद्धा बेकार हुए, माँ विश्वास ही खो बैठी। माताजी मैत्रेयी को जलती निगाहों से देखती है, जैसे वही भस्म करनेवाली विवाह की अग्नि हो और वही दहेज प्रथा की राक्षसी।"[1] 'दहेज' प्रथा का विरोध करनेवाली कस्तुरी इसी कारण लडकी के लिये वर ढूंढने खुद चली जाती है, यह लडके के पिता को बर्दाश्त नहीं होता। लडके का पिता झुल्लाहट भरे शब्दों में कहता है - "रोज-रोज आ जाती है। तुने यह घर खाला का घर समझ लिया है? झोला उठाया और चल दी। हमारी कोई इज्जत नहीं है क्या, कि शादी-ब्याह जैसा मामला लुगाई तै करे। जा यहाँ से, कोई मर्द-मानस हो तो भेजना। बिरादरी के लोग मखौल उड़ाते है।"[2] स्त्री कितनी भी पढ़ी लिखी, नोकरीपेशा हो परंतु भारतीय स्त्री को यहाँ की परंपराएँ पुरुष का दर्जा नहीं देता है। इसी कारण बेटी की शादी की बातचीत करने गई कस्तुरी का समाज मखौल उडाता है। परंतु कस्तुरी जिद्दी स्वभाव की स्त्री रही है, उसने अपने जिंदगी में हारना नहीं सिखा था। आखिर वह अपने बेटी के लिए 'दहेज' के खिलाफ रहे डॉक्टर शर्मा का रिश्ता ढूंढही निकालती है।

ऊ) **साज-श्रृंगार से परहेज** - स्त्री का साज-श्रृंगार करना उसके बरबादी का कारण कस्तुरी मानती थी। वह जानती थी पुरुष को नारी का मादा रूप पसंद आता है, जो साज-श्रृंगार से निखर आता है। स्त्री आकर्षण का कारण उसका साज-श्रृंगार ही रहता है यह माननेवाली कस्तुरी अपने विधवापन को जीते हुये साज-श्रृंगार को त्याग चुकी थी और अपनी बेटी मैत्रेयी

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 78.
2. वही, पृ. 78

को भी पुरुष लोलुपता से बचाने के लिये साज-श्रृंगार से दूर रखती थी। माँ उसके बालों को 'छेरी-सा मूँड' देती है, क्योंकि 'स्त्री के लिए बाल श्रृंगार बताए गए है।' वह उसके नाक-कान छेदे जाने की भी विरोधी है, क्योंकि उसकी दृष्टी में यह ''लडकी को छेद-बाँधकर गुलामी करने के लिए तैयार करना है।''[1] इसतरह साज-श्रृंगार नहीं बल्कि कर्तृत्व स्त्री का श्रृंगार माननेवाली कस्तुरी ने अपनी मैत्रेयी को अपने ही रूप में ढाला था। ''खादी के कपड़े, सूनी-बिन काजल की आँखें, खुश्क होता चेहरा, फटे-फटे हाथ-पाँव किसी चिकनाहट का इस्तेमाल नहीं। पेट और पीठ उघाड़ धोती नहीं।''[2] साज-श्रृंगार से परहेज करने वाली कस्तुरी का कहना था - ''सामर्थ्य औरत और मर्द में अलग-अलग नहीं होता जो जुटा ले उसी की हो जाती है।'' इसतरह स्त्री को अपने अंदर के सामर्थ्य को पहचानने की बात हमेशा वह महिला मंडल के स्त्रियों के बीच करती थी। मैत्रेयी को भी वह समझाती थी कि अपने अंदर के गुणों को पहचान कर कुछ ऐसा कार्य कर जो लोगमंगल का हो। इस तरह नारी शक्ति को जागृत करनेवाली कस्तुरी का नई नारी का रूप सामने आ जाता है। कस्तुरी के बारे में क्रांतिकुमार जैन कहते है - ''वह इक्कीसवी शताब्दी की दहलीज पर खड़ी भारतीय मध्यवर्गीय स्त्रियों की प्रतीक गाथा भी हो जाती है जो स्वामी दयानंद, महात्मा गांधी, स्त्री-शिक्षा, महिला मंडल, स्वतंत्रता आंदोलन जैसे घाटों-किनारों से होती हुई स्त्री-मुक्ति के कगार को छूने को लालायित है।''[3] इस तरह आजादी के बाद परंपराओं की बेडियों को तोडकर अपना अलग अस्तित्व निर्माण करनेवाली भारतीय स्त्री का रूप कस्तुरी में प्रतिबिंबीत होता है।

1.6 मैत्रेयी जी के जीवन पर प्रभाव रहे रिश्तेदार और मित्रजन :-

मैत्रेयी ने अपने बीस बरस तक समय अपने गांव में ही बीताया परिणामस्वरूप गांव के कई लोगों की नीति-कुनीति से उसका जीवन प्रभावित होता रहा। माँ के महिला मंगल में नौकरी करने के कारण और पिता का साया जल्दी उठ जाने के कारण उसे माता-पिता का प्यार प्राप्त नहीं हुआ और स्नेह की भूखी मैत्रेयी गांव की महिलाओं से सहजा से जुड जाती थी। बचपन से लेकर कॉलेज तक पुरुष व्यक्तित्व से भी वह प्रभावित रही वह निम्नलिखित है -

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 48.
2. वही, पृ. 124.
3. सं. विजय बहादुर, 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. 245.

अ) स्त्री रिश्तेदार एवं मित्रजन - 1) बडी कक्को, 2) गोरावाली कक्को, 3) प्रभा भौजायी, 4) खेरापतीन दादी, 5) बंगरावाली भाभी, 6) कुलावती चाची, 7) चंदा चाची, 8) नर्मदा, 9) मालकिन की बेटी आशा, 10) विद्या, 11) लीलावती नाईन, 12) सल्लो, 13) निशि खरे, 14) विभा, 15) कविता, 16) राजकुमारी, 17) सूर्य किरण, 18) माया, 19) अलिया, 20) माधवी, 21) अमरजीत कौर, 22) शोभा मांजरेकर आदी।

आ) पुरुष रिश्तेदार और मित्रजन - 1) भगवानदास (टीचर), 2) मेवाराम, 3) हीरालाल, 4) रामचंदर, 5) चरणसिंह, 6) खुबाराम (जाट), 7) पाठक, 8) अहिर चिंतामण सिंह, 9) एदला, 10) बाला, 11) खिल्ली गाँव के प्रधान, 12) दादा, 13) जगजीत सिंग, 14) जगन्नाथ सिंह त्रिवेदी, 15) चंपाराम, 16) विधिचंद, 17) प्रेमसिंह, 18) श्री प्रकाश, 19) जानकीरमण, 20) बस ड्राइवर, 21) प्रिंसिपल साहब, 22) खरे साहब, 23) शिवदयाल, 24) चित्रसिंह, 25) अमजद, 26) हेतराम (मामा) आदि।

1.7 मैत्रेयी के बचपन को प्रभावित करनेवाले व्यक्तित्व :-

मैत्रीयी का जन्म मध्यमवर्गीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था। मैत्रेयी की जन्म के समय घर की आर्थिक स्थिती अच्छी नहीं थी, परंतु पिता हीरालाल के मृत्यू के बाद माँ कस्तुरी ने शिक्षा ग्रहण कर महिला मंगल योजना में नौकरी हासिल की और छोटी उम्र की मैत्रेयी को छोडकर वह भाग-दौड करती रही, परंतु मैत्रेयी के परवरिश में उसने कभी कोताई नहीं की लेकिन बचपन में बच्चों को जो माँ-बाप का प्यार प्राप्त होना चाहिए वो मैत्रेयी के नसीब में नहीं था। दादा मेवाराम जब तक रहे उन्होंने बडे लाड-प्यार से मैत्रेयी को संभाला था, परंतु स्नेह की भूखी मैत्रेयी गांव की बुजुर्ग औरतों की ओर खिंचती चली गई जो उसे लाड-प्यार से दुलारती थी, जिनके व्यक्तित्व का प्रभाव मैत्रेयी पर रहा, वह निम्नलिखित है -

अ) खेरापतिन चाची - नौकरी की वजह से बाहर गांव जानेवाली कस्तुरी मैत्रेयी को खेरापतिन के यहाँ छोडकर चली जाती थी। खेरापतिन चाची मैत्रेयी की देखभाल करती थी। गांव की बुढी पुरोहितीनी खेरापतिन दादी से उसे बडा स्नेह निर्माण हो जाता है। लोकगीत और लोककथा जाननेवाली खेरापतिन दादी उसे विलक्षण स्त्री लगती थी। खेरापतिन दादी का गाना उसे आकृष्ट करता है, विशेषत: 'चन्दना का गीत' गाते समय वह अपना स्वर भी दादी के साथ जोड देती थी, जो दादी और ही लाड-प्यार करती थी। मैत्रेयी अपने और खेरापतिन दादी

के संबंध के बारे में कहती है - ''गाँव की खेरापतिन और उनका क्या संग। यह दुनिया को आँखें खोलकर देखनेवाली नई बच्ची और वह जमाने की मार खाई चमड़ी पर आड़ी-तिरछी लकीरों भरे चेहरे वाली बुढी होती स्त्री।''[1] दादी के गीतों ने मैत्रेयी की बोध-कक्षा विस्तारित होने लगती है और माँ कस्तुरी चिंतीत होने लगती है - ''बचपन के रहते ही बचपन छोडना पडा है, मैत्रेयी इस बात को जानती है कि नहीं जानती, हाँ कस्तुरी समझती है कि पढाई की गंभीरता के चलते उसे न गाना है, न खेलना है, बल्कि इस गांव से अपना वजूद उठा लेना है।''[2] शिक्षा छोडकर लोकगीतों की तरफ मैत्रेयी का आकर्षित होना कस्तुरी के चिंता का विषय बन जाता है। माँ कस्तुरी उसे दादी के घर से लाकर शिक्षा की तरफ ध्यान देने की बात करती रहती है, परंतु मौका पाते ही दादी के घर भागनेवाली मैत्रेयी लोकगीत और लोककथा के प्रभाव में आ जाती है। इस तरह पुरोहितीन खेरापतिन दादी के लाड-प्यार के साथ उसके गीतों ने मैत्रेयी को जिंदगी भर 'गांव' : आकर्षण का केंद्र रहा है।

आ) चंदना की कथा - मैत्रेयी गांव में जन्मी और वहीं पली-बढी। बीस साल तक जिसे संस्कार बनने का महत्वपूर्ण समय माना जाता है उस समय गांव में रही मैत्रेयी पर गांव के परिवेश का काफी प्रभाव रहा है। गांव में स्त्रियों के इर्द-गिर्द रहनेवाली मैत्रेयी पर गांव की खेरापतिन चाची, कलावती चाची का प्रभाव ज्यादा रहा है। मैत्रेयी को मानसिक रूप से परिपक्व बनाने को कथाओं, लोकगीतों, मुहावरों, कहावतों ने मदद की है। खेरापतिन चाची जो चंदना की कथा सुनाती थी जिसें पर पुरुष से प्रेम करने पर पति द्वारा मार दिया जाता है। इस कथा का प्रभाव मैत्रेयी पर ज्यादा रहा है। चंदना का यत्किंचित दोष न होने पर भी चंदना आखिर क्यों मारी जाती है? इस बारे में मैत्रेयी बचपन में बार-बार सोचती थी। इस कथा ने उसे स्त्री जीवन की सच्चाई को ढूंढने के लिये बाध्य किया और आगे जाकर स्त्री-स्वतंत्रता के विचार उन्होंने अपने साहित्य में रखे इसलिए वह 'कस्तुरी कुंडल बसै' में कहती है - ''रिश्ते के भाई युवराज के बारे में बार-बार पूछे जाने पर उसे चंदना की कथा याद आती है, जिससे कुंवर जी ने सकल के बारे में पूछा था और उसके दो टुकड़े कर डाले थे। सिर अलग, धड अलग। अपने संदर्भ में वह सोचती है, काटे तो सही यह डॉक्टर,। मैत्रेयी इसको काट देगी, क्योंकि वह चंदना नहीं है।''[3] इस तरह पुरुष प्रधान समाज में स्त्री का कोई स्थान नहीं था,

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 74.
2. वही, पृ. 42.
3. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 247.

उसी समाज में स्त्री जीवन के अन्याय से भरे यथार्थ को सामने लाना और स्त्री को न्याय प्राप्त करा देना मैत्रेयी के साहित्य का उद्देश्य रहा दिखाई देता है।

इ) अहीर और जाट कुर्मियों के संस्कार - मैत्रेयी पुष्पा ब्राह्मण माता-पिता की संतान होकर भी झांसी के खिल्ली गांव के प्रधान अहीर चमन सिंह के घर पली-बढी जो एक संयुक्त परिवार था। "इतना बडा परिवार, पाँच काका, चार काकी, दस भाई और चार भाभियाँ। सारे कुटुंब की लाडली मैत्रेयी रोज डी. बी. इंटर कॉलेज मेरठ में पढने जाती-आती है।"[1] जाटो-कुर्मियों में रहने के कारण एक 'बोल्डनेस' उसमें बचपन से आ गया परिणामस्वरूप किसी भी बात की परवाह न करते हुए अपनी बात कहना उसका स्वभाव हो गया। अहीरनियों व जाटनियों की छत्रच्छाया ने जहाँ उन्हें ब्राह्मणवादी 'कुलशील परंपरा' व 'नैतिक परंपरा' से मुक्त रखा वही उस 'कैरेक्टर कोड' को भी उन पर नहीं लागू होने दिया, जिसके रहते वह 'स्वतंत्र प्रकृति की दबंग औरत' नहीं हो सकती थी।"[2]

1.8 शिक्षा :-

मानव जीवन का प्रारम्भ शिक्षा द्वारा ही होता है। समाज में रहते हुए मनुष्य अनुभव और अनौपचारिक पद्धती से शिक्षा ग्रहण करती है, परंतु औपचारिक शिक्षा के माध्यम से मानव सभ्यता, संस्कारों, जीविकोपार्जन साधनों को प्राप्त करता है। इसलिए शिक्षा को मानव जीवन में अनन्य साधारण महत्त्व है; क्योंकि शिक्षा व्यक्ति जीवन के प्रति उचित दृष्टिकोण बनाता है। संघर्षमय जीवन को शिक्षा के माध्यम से सफल बनाने की कोशिश करता है।

मैत्रेयी पढ-लिखकर बडी हो जाये और नौकरी प्राप्त कर ले यही मंसा माँ कस्तुरी ने अपने मन में बांधी थी। खिल्ली गांव के परिवेश में रहकर मैत्रेयी का शिक्षा पर से ध्यान हट जाना माँ कस्तुरी के लिये चिंता का विषय था। माँ कस्तुरी हर बार मैत्रेयी को शिक्षा का महत्व समझाती, मार देती, डाँटती और स्कूल भेज देती थी। दादाजी के देहांत के बाद अकेली मैत्रेयी को गांव में रखना ग्रामसेविका बनी कस्तुरी को उचित नहीं लगा और शिक्षा के लिये वह मैत्रेयी को परिचितों के घर रखती चली गई जहाँ विपत्तियाँ मैत्रेयी का इंतजार कर रही थी।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 56.
2. सं. विजय बहादुर, 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. 243.

पाँचवी कक्षा का एक साल मैत्रेयी ने कन्या गुरूकुल में बिताया। भूखे पेट रहनेवाली लडकियाँ गुरूकुल के मास्टर की शिकार बन जाती, मैत्रेयी ने देखा भी और अनुभव भी किया।

माँ कस्तुरी का पहला पोस्टिंग हो जाने पर मैत्रेयी को समाजकल्याण बोर्ड की संयोजिका के घर रहने-पढ़ने का प्रबन्ध किया जहाँ घनघोर विपत्ती बास कर रही थी। संयोजिका का छोटा लडका शिकारी बनकर आ गया, वह रात-दिन भय में जीने लगी। "कितने दिन? कितने दिन? शिकारी की आँखे अँगारे-सी दहकती है? उसके सामने कितने दिन? उसकी बाँहें अजगर-सी कसती है, विरोध कितने दिन?"[1] आखिर वह गांव भाग आई थी कश्मीरा बीबी के साथ। कस्तुरी को खबर मिली तो उसे एक साल बरबाद होने का अफसोस सिर्फ हुआ था। तीन महीने बाद लौटी माँ ने कहा था - "ऐसे भागने से तेरा क्या बनेगा? कोई बुरी नजर न डाले, इसलिए ही मैंने तेरे बाल काट दिए थे। कान-नाक के छेद मुँछने को कहा था, जेवर भी आदमी की बुरी निगाह क्यो न्योता देते है। सामना करना सीखना होगा, ऐसे ही जैसे हम विधवा औरतें सिखा करती हैं। यह बात गांठ में बांध ले कि मर्द की जात से होशियार रहकर चलना होता है, भले वह साठ साल का बूढा हो।"[2] मर्द से होशियार रहने का पाठ पढ़ाकर शिक्षा के लिए माँ कस्तुरी उसके रहने के ठिकाने बदलती रही, परंतु हर जगह शिकारी जाल लगाकर बैठा हुआ उसने पाया था।

अलीगढ अपने ही भाई के घर माँ कस्तुरी ने मैत्रेयी को शिक्षा लेने के लिए रखा गया, जिसके पत्नी से मिलने आनेवाले एक बूढे ने अचानक मैत्रेयी पर हमला किया वह भी ठिकाना उजड गया। "दस साल की उम्र में वह पैसेंजर ट्रेन में बैठकर अकेली झाँसी गई थी। छोटी अवस्था में सफर शुरू करनेवाली लडकी के लिए कौन रास्ता दुर्गम है।"[3] खुंखार जानवरों से बचती-बचती वह खिल्ली गांव दादाजी के पास आ पहुँची वही बडे परिवार में लाड-प्यार में पली मैत्रेयी डी. बी. इंटर कॉलेज मेरठ में पढने जाने लगी जो वह पैंतालिस लडकों में अकेली लडकी कक्षा में थी। सुरक्षा के लिए घंटा खत्म होते ही टीचर के पीछे जाती थी, उनके साथ वह सुरक्षित थी। परंतु आगे महाविद्यालयीन जीवन में उसे प्रधानाचार्य से ही सामना करना पडा। उनके खिलाफ मैत्रेयी ने आवाज उठाई, पुलिस, सुरक्षा घेराव, उपोषण आदि किये उस

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 52.
2. वही, पृ. 53.
3. वही, पृ. 55.

प्रसंग में भी माँ ने ही उपदेश दिया - "प्रिंसिपल से माफी माँग ले। बात यही तक है। अलीगढ़ इगलास होती तो लोग मदार गेट (वेश्याओं का इलाका) पहुँचा देते। माँ की बात पर मैत्रेयी हतप्रभ रह गई थी।"[1] इस तरह शिक्षा लेते समय मैत्रेयी को इन सब प्रसंगों से गुजरना पडा था। बचपन से ही शिक्षा से लगाव न रखनेवाली मैत्रेयी के जीवन में शिक्षा लेते समय इतनी आपत्तियों का सामना करना पडा फिर भी माँ के प्रोत्साहन से मैत्रेयी ने बुंदेलखंड कॉलेज झाँसी से हिंदी साहित्य में बी. ए. किया। बी. ए. करने के बाद शादी करने की मनषा उसने व्यक्त की परंतु माँ के आगे एक न चली तो उसने एम. ए. की शिक्षा हासिल की। इसतरह माँ कस्तुरी जो शिक्षा को स्त्री मुक्ती का द्वार समझती थी उसी स्त्री की लडकी मैत्रेयी को भी जीवन में शिक्षा का महत्त्व समझ में आ गया। मैत्रेयी ने अपने साहित्य के अनेक कथा, उपन्यासों में स्त्री शिक्षा के महत्त्व को विशद करते हुए स्त्री शिक्षा के लिये संघर्ष करती स्त्रियों का चित्रण किया है। शिक्षा के बारे में मैत्रेयी पुष्पा कहती है - "आज महिलाओं के भीतर शिक्षा का प्रसार और उनके भीतर आत्मविश्वास भरने की जरूरत है। यह कार्य सिर्फ चीखने-चिल्लाने और पुरुषों का अंधविरोध करने से नहीं होगा। महिलाएँ यह कार्य शांतिपूर्ण असहयोग से कर सकती हैं, यानी जो वे चाहें उस पर दृढतापूर्वक अमल करे और पुरुषों को उसे मानने, स्वीकार करने को तैयार करे।"[2]

इस तरह आज के आधुनिक युग में महिलाओं के लिए शिक्षा अत्यावश्यक है जिसे प्राप्त कर महिला पुरुषों के समान समानाधिकार को प्राप्त करे। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन शिक्षा के माध्यम से अपना जीवन मार्ग सुकर करे यही विचार मैत्रेयी अपने साहित्य के माध्यम से व्यक्त करती हुई, जिसने अनंत संकटों का सामना करते हुए शिक्षा को हासिल किया, उसने शिक्षा के महत्त्व को स्त्री समाज के सामने स्पष्ट किया है।

1.9 **विवाह** :-

मैत्रेयी के विवाह की भी अपनी एक कहानी तैयार हो गई हैं। माँ कस्तुरी चाहती थी मैत्रेयी पढ-लिखकर नौकरी प्राप्त करे, परंतु उसने सत्रह साल में ही ऐलान किया - "माँ, मेरी शादी करा दो।" लडकी विचार दृढता के कारण कस्तुरी वर ढूंढने खुद निकल पड़ी जो समाज के रिती-रिवाज के विरुद्ध था, परिणामस्वरूप; उसकी प्रताड़ना होने लगी - "रोज रोज

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 92.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 71.

आती है। तूने यह घर खाला का घर समझ लिया है? झोला उठाया और चल दी। हमारी कोई इज्जत नहीं? है क्या, कि शादी-ब्याह जैसा मामला लुगाई तय करे। जा यहाँ से, कोई मर्द-मानस हो तो भेजना।''[1] कस्तुरी अलीगढ़ विश्वविद्यालय से लेकर रूडकी और लखनऊ तक घुमी। सूची के सारे लडके किनारे लग गए। डॉक्टर, इंजीनिअर, मैकेनीक लडके देखे पर कभी दहेज बीच में आती तो कभी लडकी के जमीनपर आँखे रखकर बात होती। माँ कस्तुरी खुद दहेज प्रथा के विरोधी थी और मैत्रेयी भी विरोधी थी। दहेज स्त्री की रक्षा ससुसाल में हो वह सुखी रहे इस कारण दिया जाता है तो उसका वह विरोध करती है, क्योंकि 'दहेज' के कारण वह अपनी पहचान बनाना भूल जाती है और परंपरा से आई बेटी, पत्नी, माँ इन्ही भूमिका में जीना अपना जीवन मानती है, इसलिए 'दहेज' का विरोध करते हुए मैत्रेयी पुष्पा कहती है - ''मेरी तीव्र इच्छा है, हजारों साल से चला आ रहा सिलसिला टूटना चाहिए। अपने हक के लिए लडना चाहिए। संरक्षण और सुरक्षा स्त्री के लिए वे खतरनाक और बर्बर शब्द हैं, जो भरोसा देकर उसे नष्ट करते हैं। बात वही है कि जो अपने प्रति न्याय की बात नहीं सोचता, उसे न्याय देने की मूर्खता कौन करेगा?''[2]

'दहेज' देकर बेटी को ससुराल में सुरक्षित करना यह गलत है उसके बदले पिता ने बेटे की तरह बेटी को भी अपनी संपत्ती का हक देकर उसे सुरक्षित किया तो लडकियाँ आत्मनिर्भर बन जायेगी इसलिए मैत्रेयी कहती है - ''दूसरों के फैसलों पर चलने से जो सुरक्षा मिलती है, वह खतरनाक और जानलेवा सिद्ध होती है।''[3] आज खुद स्त्री ने दहेज प्रथा का विरोध करते हुए अपनी सुरक्षा खुद करनी चाहिए। आज उसे संविधान ने जो अधिकार प्रदान किये है उस अधिकारों को अपनाने का प्रयास आज की स्त्री ने करना चाहिए।

अंत में विद्या बीवी मैत्रेयी के लिए डॉक्टर शर्मा का प्रस्ताव ले आयी वह वर माँ कस्तुरी को नितांत योग्य लगा। डॉ. रमेशचन्द्र शर्मा से मैत्रेयी का रिश्ता तय कर आइ। शादी गांव में ही करा दि लेकिन शादी इसतरह यादगार रही की शादी के बनाय फजियत ज्यादा हुई। डॉ. रमेशचन्द्र की पत्नी बनकर मैत्रेयी सिकुर्रा गांव से विदा होकर अलीगड आ पहुँची।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 78.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'सुनो मलिक सुनो', वाणी प्रकाशन, प्र. सं. 2006, पृ. 23.
3. वही, पृ. 22

1.10 दांपत्य-जीवन :-

परंपरा के विरुद्ध ऐलान करनेवाली माँ कस्तुरी की पुत्री थी। मैत्रेयी का विवाह डॉक्टर से हुआ जो सुस्वभावी थे। उन्हें मैत्रेयी का निडर स्वभाव मालूम था और पहली रात में ही उन्होंने अनुभव किया। मैत्रेयी ने अपनी जिंदगी की सच्चाई से डॉक्टर पती को परिचित करा दिया जिससे उनके बीच विश्वास का रिश्ता हमेशा दृढ रहा। मैत्रेयी कहती है - भाई! कौन-सी लडकी है, जिसे किशोरावस्था में आकर्षण न हुआ हो? मैंने कुछ छिपाने की कोशिश नहीं की। यहाँ तक कि जिसे सुहागरात कहा जाता है, "इन लम्हों में मैंने पति से खुलकर बात की। उन प्रेमियों के बारे में भी बता दिया जिनसे मैंने प्रेम किया और आज भी करती हूँ।"[1] आखिर शादी-ब्याह करके आई मैत्रेयी को इस पुरुष प्रधान समाज में पति की विवाह की फलश्रुती उसने तीन लडकियों को जन्म दिया था और इन लडकियों के पालन-पोषण जीवन में महत्वपूर्ण जिम्मेदारी समझ ली और उसने गृहस्थी का चोला ओढ लिया। पारिवारिक जीवन के बारे में मैत्रेयी कहती है - "हमारे शास्त्रों के अनुसार परिवार सभी के लिए न्यायालय है। उसके किए-धरे का यहाँ फैसला होता है, शाबाशियाँ और सजाएँ सबसे पहले यहीं बोली जाती हैं। इन्हीं परिवारों का समूह समाज है, जो एक-दूसरे के परिवार के लिए नीतियाँ तय करता है। स्त्री इस व्यवस्था से बहुत डरती है। बेशक वह फूँक-फूँककर कदम रखती है क्योंकि परिवार की नाराजगी उसकी जिंदगी है। क्या यही कारण रहा कि मैंने परिवार के अंकुश नहीं माने? जब-जब पति के दबाव में आई, कसावट में छटपटाने लगी। यों तो गृहस्थ से समझौता भी किया था। तीन बच्चियों की माँ होकर मैं उनकी परवरिश के लिए अपने आप को आज्ञाकारिणी पत्नी में ढालती रही? कुछ भी हो सकता है।"[2] मैत्रेयी ने निडर बनकर अपने पारिवारिक जीवन में गलत रूढी-परंपराओं का विरोध जरूर किया, परंतु संयुक्त परिवार से लगाव रखनेवाली उन्होंने अपना वैवाहिक जीवन संघर्ष से बचाने के लिये समय-समय पर समझौता किया और अपने पारिवारिक जीवन को सुखी बनाया। डॉक्टर मैत्रेयी को बीच में छोडकर चले बसे। मैत्रेयी ने तीन बच्चियों के जिंदगी सुख से भर देना आज अपना पारिवारिक कर्तव्य संभाला है।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्तली, प्र. सं. 2010, पृ. 49.
2. वही, पृ. 50.

1.11 बेटियाँ मैत्रेयी के लिये प्रेरणा स्थल :-

दांपत्य जीवन की फलश्रुती मैत्रेयी ने पहली बेटी नम्रता को जन्म दिया तब बेटी को जन्म देना किसी गुन्हगार से कम नहीं था जो उन्होंने भी परिवार, समाज से ताने-बाने सुने। फिर उन्हें दो लडकियाँ ही हुई - मोहिता और सुजाता। माँ कस्तुरी की बेटी मैत्रेयी रही जिसने शिक्षा और निडरता को स्त्री जीवन में महत्व दिया था जो माँ मैत्रेयी ने भी अपनी तीनों बेटियों को अच्छे संस्कार, उच्च शिक्षा देना अपना कर्तव्य माना और यह तीन लडकियाँ ही उनका जीवन बन गई। तीनों बेटियाँ पढ-लिखकर डॉक्टर बनी है, आज अखिल भारतीय आर्यु विज्ञान संस्था, दिल्ली में कार्यरत है और निजी प्रॅक्टिस भी किया करती है।

बेटियाँ बडी होने पर गृहस्थी का बोझ धीरे-धीरे कम हो गया तो बडी बेटी नम्रता ने माँ मैत्रेयी को लिखने के लिये प्रेरित किया। अपने लेखिका बनाने के बारे में बेटियों के बारे में मैत्रेयी कहती है - ''मेरे यहाँ उलटा हुआ है, बच्चों को डॉक्टर मैंने बनाया और मुझे लेखिका बच्चियों ने बनाया। हाँ, तो उन्होंने कहा, मम्मी! कविता लिखो, कहानी लिखो, कुछ भी लिखो। तो मैंने एक प्रेम-कहानी लिखी। फिर मैंने तीनों लडकियों को बारी-बारी पढ़वाई। उन्होंने कहा, मम्मी ने लिखी है, मम्मी ने लिखी है, पढ़ी तीनों ने, बहुत बढ़िया है।''[1] इस तरह मैत्रेयी पुष्पा को लेखिका बनने के लिये प्रोत्साहित करनेवाली उनकी तीनो बेटियाँ ही रही है।

1.12 मैत्रेयी के व्यक्तित्व निर्माण में युगीन परिवेश का योगदान :-

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में माता-पिता, परिवार के संस्कारों का महत्व होता उसी तरह वह जिस समाज में रहता है उस समाज के परिवेश परिणाम उसके व्यक्तित्व निर्माण में होता है। मैत्रेयी के व्यक्तित्व निर्माण में भी उसके समय के सामाजिक परिवेश ने अहंम् भूमिका निभाई है। उस युगीन परिस्थिती को देखना आवश्यक है।

अ) सामाजिक परिस्थिती - मैत्रेयी का जन्म 30 नवंबर 1944 में हुआ जब भारत देश अंग्रेजों के पारतंत्र्य में था। उसके जन्म के बाद तीन वर्ष देश स्वतंत्र हुआ परंतु गुलाम देश की परिस्थिती में तीन वर्षों में कोई ज्यादा परिवर्तन नहीं हुआ था। समाज में परंपरा से आये रिती-रिवाज, परंपराएँ, शोषण, गुलामी शुरू थी।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 59.

जमींदारों का शोषण - स्वतंत्रता के बाद सरंजामशाही की परंपरा जारी रही परंतु उसके विरुद्ध मार्क्सवादी विचारधारा का निर्माण देश में हो गया और मार्क्सवादी नेताओं ने शोषित गरीब किसान, मजदूर लोगों को अन्याय के विरुद्ध वाणी दी और समाज में सरंजामशाही के विरुद्ध संघर्ष शुरू हुआ। सरंजामशाही खंडन जरूर हुआ परंतु यही सामंत वर्ग आगे जाकर राजनीतिक वर्ग में बदल गया और समाज के गरीबों के शोषण की परंपरा निरंतर शुरू ही रही। मैत्रेयी ने अपने साहित्य में किसान, मजदूरों के संघर्ष का वर्णन किया है।

स्त्री पर अत्याचार - मैत्रेयी का बचपन गाँव में बीता, उसने अपने आस-पास हमेशा स्त्री जाति पर अन्याय-अत्याचार होते देखा। परंपराओं के साखल में बंधी स्त्री हमेशा रूढी-परंपराओं का भय दिखाकर उसके विकास को रोका गया था और गाँव की स्त्री भी परिपाठी हो स्वीकारते हुए पारिवारिक जिम्मेदारी और खेती के कामों में लगी रहती थी। अगर उसने अपने स्वतंत्रता के लिये आवाज उठाई तो उसे पीटना, जलाना, मार डालना इस प्रकार के अत्याचार किये जाते थे। मैत्रेयी ने बचपन में 'चंदना की कहानी' सुनी थी जो चंदना अपने हक को प्राप्त करना चाहती थी जिसे मार दिया था। मैत्रेयी ने बचपन से पुरुषों द्वारा स्त्री पर अन्याय होते हुए ही देखा था; जिसका अनुभव मैत्रेयी ने भी ले लिया था। बचपन की अवस्था में ही मैत्रेयी को पुरुषों के हवस का शिकार बनने का प्रसंग कई बार आया था जिसका उसने डटकर सामना किया। मैत्रेयी ने ग्रामीण स्त्री पर होनेवाले अन्याय-अत्याचार, उनके दिनक्रमा का वर्णन उसकी कथा साहित्य का अभिन्न अंग है।

3. **समाज में स्थित उच्चनीचता, जातिप्रथा** - भारतीय समाज व्यवस्था चार वर्णों में विभाजित होकर उसमें भी असंख्य जातियों का निर्माण हुआ दिखाई देता है; जो परंपरा से इस समाज में वर्ण व्यवस्था में जाति व्यवस्था के पैर मजबूती के साथ स्थित है। आज के आधुनिक युग में भी जातिप्रथा नष्ट नहीं हुई है। इस व्यवस्था में शूद्र वर्ण में आनेवाली जातियाँ और अतिशूद्र मानी गई स्त्री को उच्चवर्णियों के शोषण का शिकार बनना पडा। अपने जीवन में मैत्रेयी ने भी अपने गांव में स्थित जाति प्रथा को देखा है, उसका मित्र 'एदला' निम्न जाती का होने के कारण गांव के उच्चवर्णिय लडके उस पर अत्याचार करते थे जिसका वर्णन मैत्रेयी ने 'कस्तुरी कुंडल बसै' में किया है। मैत्रेयी और एदला दोनों एक-साथ स्कूल आते जाते थे। शुद्र का लडका 'एदला' मैत्रेयी का अच्छा दोस्त रहा है। मैत्रेयी ने जाति विरोधी अपने मत

'समय मेरे संदर्भ में' शीर्षक में इस प्रकार व्यक्त किये है - ''यह जीवन की विडंबना नहींतो और क्या है कि देश आजादी की स्वर्ण जयंती मना रहा है और स्त्री अशिक्षा, दहेज तथा चाल-चलन की शुचिता की सूली पर चढी हुई, जिंदगी की भीख माँग रही है। जेट और कम्प्यूटर के युग में सामाजिक सत्ता का सामंतवादी वर्चस्व अपनी पूरी अपरिवर्तनीय के साथ उसकी दुनिया पर काबिज है। नहीं तो पांच हजार वर्ष पूर्व का संविधान अब तक भी संशोधित तक न होता? शूद्रों का संविधान डॉ. आंबेडकर जी मार्फत बदला। आजादी में भाग लेने वाली वे स्त्रियाँ कहा गई? कोई भी अपने वर्ग के लिए लडने नहीं आई? क्या उन्होंने अपनी स्वतंत्रता के बारे में कुछ नहीं सोचा?''[1]

इस प्रकार स्वतंत्रता के बाद भी भारतीय समाज में स्थित जातिप्रथा में बदलाव नहीं आया है, मैत्रेयी ने भी अपने जीवन में इस प्रथा को देखा है। आज वह अपने साहित्य के माध्यम से जातिप्रथा के विरुद्ध लिख रही है।

4. **रूढीग्रस्त समाज** :- प्रत्येक समाज उस समाज में स्थित प्रभावशाली धर्म और राजनीति के वर्चस्व में जीता रहता है। उसमें कई लोगों का उत्कर्ष होता है तो कई लोग शोषण की सूली पर चढाये जाते है। भारतीय समाज पर भी परंपरा से 'हिंदू' धर्म का प्रभाव है जिस धर्म ने समाज में जातिव्यवस्था और वर्णव्यवस्था को बढावा दिया। धर्म रक्षा के लिये रीति-नीति का निर्माण किया। परंतु आगे यही रीति-नीति गलत नियमों से ग्रस्त होकर समाज कई गलत रूढियों का प्रचलन हुआ जैसे - छुआछूत, बालविवाह, दहेज प्रथा, सती प्रथा, स्त्री और शूद्र को शिक्षा से वंचित रखना इन गलत रूढिओं से भारतीय समाज ग्रसीत रहा। परिणामस्वरूप समाज विकास में विलंब निर्माण होता चला गया दिखाई देता है। मैत्रेयी ने अपने गांव-समाज में भी रूढी ग्रस्त समाज को देखा जिसका खंडण उन्होंने अपनी कथा साहित्य के माध्यम से करना अपना कर्तव्य समझा है। जैसे अगनपाखी, चाक इस उपन्यासों की स्त्रियाँ रूढियों को तोडती दिखालाई गई है।

5. **देश विकास के लिए पंचवार्षिक योजनाओं की घोषणा**- भारतीय समाज का आर्थिक विकास हो इसलिए 80 प्रतिशत गाँव में बसे लोगों के विकास के लिए भारत सरकार ने पंचवार्षिक योजनाओं का ऐलान किया, जो गांव के किसान लोगों को जीवन विकास का स्वर्ण

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'गोमा हँसती है', (मेरे संदर्भ में से), किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.1998, पृ.36.

उत्सव लगने लगा परंतु यह भ्रम था। पंचवार्षिक योजनाओं का आगमन गाँव में जरूर हुआ परंतु गांव का अपना सामाजिक ढाँचा टूट गया। गांव बिखरे गये। छोटे-मोटे व्यवसाय खत्म होते चले गये। 'इदन्नमम' के टिकमसिंह कहते है - "महापर्व ही था बिटिया, किसी के लिए विकास का महापर्व तो किसी के लिए विनाश का महापर्व। पारीछा खुर्द जसौरा-खड़ेसर के विनाश का महापर्व। जहाँ के निवासियों को अपनी भूमि से उखाड़ा जा रहा था। बेदखल किया जा रहा था, खदेडा जा रहा था।"[1] इस तरह पंचवार्षिक योजनाओं के कारण कई गांव का भविष्य उज्वल हो गया परंतु कई गाँव पुरी तरह विस्थापित हो गए जिससे उनका भविष्य ही उजड गया। मैत्रेयी अपने बचपन के समय आये पंचवार्षिक योजनाओं के आगमन से गांव के वातावरण के बारे में कहती है - "कायदे से मानमाफिक तौर पर प्रजातंत्र का विस्तार हो रहा था - ओए भरे ताजा सवेरे-सा जागता, जगता वह समय हमारे बाल-मन पर अंकित हुआ था, आज भी जिसे याद करके स्फूर्त हुआ जा सकता है।"[2]

इस तरह पंचवार्षिक योजनाओं के कारण भारतीय समाज में बदलते वातावरण को मैत्रेयी ने अपने बचपन में देखा था जिसका वर्णन उसके साहित्य में बखुबी से आया है।

आ) आर्थिक परिस्थिती - भारतीय समाज का मुख्य व्यवसाय खेती रहा है। जिनके पास खेती थी वे अपना जीवन सुख समाधान से जीते थे परंतु अकाल, बाढ जैसे आपत्ती के कारण उन्हें भी कभी-कभी सेठ-साहूकारों से ऋण लेना पडता और वह भी ऋण के चक्र में अटक कर शोषण का शिकार बनते। जिनके पास अपनी भूमी नहीं थी ऐसे भूमिहीन जमीदारों के यहाँ मजदूरी करके जीवन यापन जरूर करते परंतु जमीदार उन्हे अन्याय के पाते में इस तरह पीसता की उनका जीवन नरकीय यातनाओं से भरा रहता। जमींदारों के व्यवहार के बारे में मैत्रेयी ने अपनी आत्मकथा 'कस्तुरी कुंडल बसै' में वर्णन किया है - "मेरे पिता जमींदारों के विरुद्ध खडे होकर कोडों की मार मारे गये। उनका अपराध था गरीब होकर स्वाभिमान से जीना। वे लगान न देने के कसुरवार थे, सख्त से सख्त सजा के पात्र थे। ऐसे दंडित लोगों का समूह गाँव कहलाता था या गाँव का दूसरा नाम था दरिद्रता और लाचारी।"[3]

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'इदन्मनमम', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, पाँचवा संस्करण - 2006, पृ. 188.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्तली, प्र. सं. 2000, पृ. 35.
3. वही, पृ. 54.

महिलाओं को आर्थिक स्वतंत्रता नहीं थी, परंतु मैत्रेयी ने अपने बचपन के समय से भारतीय समाज के स्त्रियों में आर्थिक निर्भरता के संबंधी विचार जागृत होते देखा है। उसकी माँ कस्तुरी खुद ग्रामसेविका की नोकरी करके आत्मनिभृर बनी थी। माँ कस्तुरी स्त्री के लिये शिक्षा और नौकरी महत्वपूर्ण मानती थी और उसका प्रचार-प्रसार भी वह करती थी। मैत्रेयी ने बडे संघर्ष के साथ शिक्षा ग्रहण की थी। इसतरह मैत्रेयी ने भी स्त्री के लिए आर्थिक निर्भर होना आवश्यक माना है।

इ) धार्मिक परिस्थिती :- 'धर्म' मानव जाति के शिक्षा-दीक्षा का माध्यम था, परंतु आज धर्म के साथ राजनीति जुड गई और धर्म का स्वरूप ही बदल गया। आज 'धर्म' का उपयोग समाज में विभेद करने के लिए किया जा रहा।

अ) धार्मिक पाखंडता - आज धर्म के नाम पर समाज में विभेद करने की प्रवृत्ति बढती जा रही है, इसके कई कारण है। मैत्रेयी के समय में 'धर्म' का स्वरूप कुछ अलग था। 'धर्म' के नाम पर पंडित लोग गांववालों को ठगाते थे । तंत्र-मंत्र, जप-ताप, नारी भोग आदि को अपनाकर पंडित लोग विलासी जीवन जी रहे थे। धर्म का भय दिखाकर गरीबों को लुटना उनका नित्य का काम था। धर्म के नाम पर पाखंडता को बढावा मिला, जिसमें शोषण और अत्याचार गरीब और स्त्रियों के हिस्से आ गया था।

आ) नैतिक स्तर में गिरावट - आज धर्म के नाम पर अधर्म बढ़ता जा रहा है परिणाम स्वरूप समाज में नैतिक स्तर गिरने लगा है। मूल्यहीनता, स्वार्थांधता, सत्तालोलुपता के कारण समाज अनुशासनहीन, स्वार्थी, अव्यवस्थित, विघटित बनता जा रहा है। समाज में स्नेह, अपनत्व और प्रामाणिकता की भावना कम होती जा रही है। हर कोई अपने सुख-विलास की बात सोच रहा है। इस बदले समाज जीवन के बारे में मैत्रेयी कहती है - ''जिंदगी को विभिन्न दिशाओं, अलग-अलग कोणों से देखती है, देह में बजते अनेक रागों को मनचाहे ठियो-ठिकानों पर स्थापित करती है। अपनी काया में से चुपके-चुपके निकालकर, दूसरों के भीतर प्रवेश करती है। मन-ही-मन स्वयं को उलिच डालती है। कौन रोकने वाला है? सचमुच ही घरेलू क्रिया-कलापों, धार्मिक आडंबरों और मर्यादाओं की जडताओं को ढोते हुए उसने मार्क्स और फ्राइड के सिद्धान्तों से अपने मनोभावों का तालमेल बिठाया है।''[1]

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 93.

फ्राइड के उत्क्रांतिवाद को माननेवाली, मनभावों में होनेवाले बदलाव को स्वीकार करनेवाली मैत्रेयी के मन में एक ही सवाल हमेशा निर्माण होता है कि अगर बदलाव नियम है तो स्त्री के अपने जीवन में बदलाव लाना चाहा तो उसे दोषी क्यों माना जाता है। आज समाज में नैतिक स्तर गिरने की बात की जाती है उसकी जिम्मेदार स्त्री को ही माना जा रहा है, यह गलत है। मैत्रेयी कहती है - "उनकी नैसर्गिक इच्छाओं, भावनाओं, अर्जित की हुई योग्यताओं, स्वाभाविक क्षमताओं तथा धैर्यपूर्वक कमाई हुई कार्य कुशलताओं के मद्देनुसार सही-गलत, वैध-अवैध के विधान नहीं बनाए गए। अत: वे अंधेरें जल में तैरनेवाली मछली सी न जाने कब सीमा पार कर जाती हैं और भँवर में फँस जाती है। वहाँ उसे ताडना-प्रताडना और अन्य यातनाओं को सजा के रूप में भुगतना पडता है या जीवन के 'अन्तिम सत्य' की तरह खुद को गुनहगार की तरह देखना होता है।"[1] नैतिकता की बातें स्त्री और पुरुष दोनों पक्षों को लेकर होनी चाहिए यह विचार मैत्रेयी यहा प्रस्तुत करती है और इस सवाल को उसने अपनी कथाओं में उठाया है।

ई) राजनीतिक परिस्थिती - मैत्रेयी के जन्म के तीन वर्ष बाद देश स्वतंत्र हो गया और 1950 को देश में प्रजातंत्र लागू किया गया। परंतु देश की स्थिती में ज्यादा बदलाव होता मैत्रेयी ने नहीं देखा क्योंकि जो जमींदार थे वे राजनीतिक नेता बन गए और सेठ-साहूकार मिल-कारखानों के मालिक बने और किसान, भूमीहीन लोग मजदूर बनकर रह गये है।

स्त्री का आज भी राजनीति में नगण्य स्थान है। स्त्री राजनीति में आती जरूर है, परंतु राजनीति के निर्णय लेने का हक स्त्री को नहीं होता है बल्कि परिवार का पुरुष निर्णय प्रक्रिया में आगे होता है। मैत्रेयी इस परिस्थिती में आये बदलाव को देखना चाहती है और इस बात को उसने अपनी कथा नायिकाओं के माध्यम से सच में बदल डाला है। 'फैसला' कहानी की वसुमती, 'चाक' की सारंग नैनी और 'इदन्नमम' की मंदा आज के राजनीति में स्थान निर्माण करने वाली जागरूक स्त्री के रूप में चित्रित करते हुए संविधान ने दिये राजनीतिक अधिकार के प्रति स्त्री ने सजग होना चाहिए यह बात मैत्रेयी अपने साहित्य के माध्यम से उजागर करती है।

उ) सांस्कृतिक परिवेश - स्वतंत्रता के बाद भारतीय संस्कृति की पहचान पूरे विश्व के सामने आ गई। क्योंकि संस्कृति का पालन-पोषण और उसकी परवरिश हमेशा भारतीय समाज

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'सुनो मालिक सुनो', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2006, पृ. 226.

ने की, परिणामस्वरूप मानवतावाद, सहिष्णुता, सदाचार, प्रेम, बंधुभाव आदि मूल्यों का जतन भारतीय संस्कृति ने किया। इस कार्य में भारतीय समाज में स्थित, तीज-त्यौहार, मेले, विविध कलाओं का योगदान महत्त्वपूर्ण है जिन्होंने इसे संजोया रखा है। भारतीय समाज में स्थित संस्कृति का प्रभाव मैत्रेयी के जीवन पर बचपन से रहा है। बुंदेलखंड परिवेश की विशेषताओं को लेकर मैत्रेयी का बचपन संस्कारित हो गया।

1. **तीज-त्यौहार, मेले** - गाँवों में हर साल त्यौहार, मेले लगाये जाते है जिससे सालभर किसानी करने वाले किसान के जीवन में आनंद-सुख का आगमन हो, जीवन के सुख-दुःख भूलकर कुछ क्षणों के लिये खुशियाँ मनाई जाती है। एक-दुसरे के सुख-दुःख बाँट लिये जाते है। सुखों के क्षणों को पकड़ने के लिए तीज-त्यौहार, मेलों को अनन्यसाधारण महत्त्व है। 'इदन्नमम' में भागवत पठन के बाद भोजन देने की प्रथा है जो गांव के लोगों को एकत्र लाती है। साथ ही दीपावली का त्यौहार खुशी से मनाया जाता है।

2. **ढोल पर गीत गाना** - खेरापतीन चाची, कलावती चाची के साथ रहनेवाली मैत्रेयी बचपन से ही खेरापतीन चाची को गाने में साथ करती थी। मैत्रेयी को फागुन के गीत आते है साथ ही वह ईसुरी के फाग ढोल बजा बजाकर गाना बचपन से ही सीखी है आज भी मैत्रेयी गांव जाती है तब तीज-त्यौहार गीत गाती रहती है। शादी के समय, फागुन के समय, त्यौहार के समय गीत गाकर मैत्रेयी अपने बचपन के दिनों को आज भी याद करती है।

3. **कथाओं, मुहावरों, कहावतों का प्रभाव** - ग्रामीण लोगों की बोलचाल की भाषा में कहावतें, मुहावरों का प्रचलन ज्यादा होता है। जो मैत्रेयी बुंदेलखण्ड भाषा में प्रचलित कहावतें, मुहावरों को वह बचपन से सुनती आई जिसे उन्होंने भी अपना लिया है जो उनके साहित्य बुंदेलखण्ड के भाषा में स्थित कहावते, मुहावरों के साथ-साथ कथाओं, गीतों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है।

4. **शिक्षा का प्रचार-प्रसार** - अंग्रेजी शासन के परिणाम स्वरूप और भारतीय सुधारकों के कार्य के कारण समाज में शिक्षा का महत्त्व बढता चला गया। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा का महत्त्व समाज में बढता गया परंतु स्त्री शिक्षा की तरफ ज्यादा ध्यान नहीं था। स्त्री के शिक्षा विरोध का चित्रण मैत्रेयी ने अपनी 'बेटी' नामक कथा में किया है। स्वतंत्रता के बाद 'स्त्री शिक्षा' प्रचार के महत्त्व को स्पष्ट किया है। मैत्रेयी की 'माँ कस्तुरी' स्त्री शिक्षा का महत्त्व जान

गई थी, ग्रामसेविका का कार्य करते समय गाँव-गाँव में वह स्त्री-शिक्षा का प्रचार-प्रसार करती थी। मैत्रेयी पढ़-लिखकर नौकरी प्राप्त कर ले यही उसके मन की आशा थी। इसतरह माँ से ही शिक्षा का महत्त्व समझ पायी मैत्रेयी ने अपने साहित्य के माध्यम से स्त्री शिक्षा का पुरस्कार लिया है।

इस तरह मैत्रेयी के व्यक्तित्व निर्माण में उसके समय के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परिवेश का प्रभाव छाया रहा दिखाई देता है। अपने समय में जीवन जीते समय उसने जो कुल देखा, भोगा, अनुभव किया उसको उन्होंने अपने साहित्य में चित्रित किया। मैत्रेयी के साहित्य की मूलाधार स्त्री जरूर है परंतु वह स्त्री साहित्य के माध्यम से सामने आती है तब अपने समय का सारा परिवेश लेकर उभरती है; भारतीय ग्रामीण समाज का यथार्थ पाठकों के सामने स्पष्ट करती है।

1.13 व्यक्तित्व गुण :-

बीसवीं सदी के स्त्री लेखिकाओं में मैत्रेयी पुष्पा का नाम आज अग्रणी स्थान पर है। मैत्रेयी के साहित्य के स्त्री-विमर्श को देखने के बाद उनके व्यक्तित्व के पहलु सामने आ जाते है। साथ ही उनकी आत्मकथा 'कस्तुरी कुंडल बसै' और 'गुडिया भीतर गुडिया' में से उनके व्यक्तित्व के पहलू निम्न प्रकार से सामने आ जाते है -

1. **सादगी** - पितृछाया विहीन मैत्रेयी को पुरुष लोलुपता से बचाने के लिये नौकरी करनेवाली माँ ने मैत्रेयी के सौंदर्य को बचपन में ही कुरूप रूप दे दिया। उसके बालों को छोरी सा मुड दिया था। अपने रहन-सहन के बारे में मैत्रेयी कहती है - "खादी के कपडे, सुनी-बिन काजल की आँखें, खुश्क होता चेहरा, फटे-फटे हाथ-पाँव, किसी चिकनाहट का इस्तेमाल नहीं, पेट और पीठ उघाड़ छोती नहीं।"[1] "बेरंग कपडे, उजडा सूना चेहरा, नंगे-बूचें हाथ, बैरौनक खुरदरे पाँव ---।"[2] परिणामस्वरूप मैत्रेयी के रहन-सहन में सादगी आ गई। कभी वह कुर्ता पायजामा तो कभी साडी पहनती है। उन्हें हलके रंग के कपडे पसंद है। क्यों न लोग उन्हें गँवार कहे पर उन्होंने अपने रहन-सहन में बदलाव नहीं किया। आज भी वह सादगीपूर्ण जीवन जी रही है।

2. **स्वभाव** - बचपन से ही संघर्षरत रहा जीवन, माँ का असाधारण व्यक्तित्व मैत्रेयी में अक्खड़पन लाने में कारण बना। मैत्रेयी स्वतंत्र प्रकृति की दबंग नारी है। ब्राह्मण माता-पिता

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं.2000, पृ. 124.
2. वही, पृ. 84.

की संतान होकर भी झाँसी जिले के 'खिल्ली' गांव के प्रधान अहीर चिमनसिंह के संयुक्त परिवार में पली बढी। उसमें जाटनियों और अहीरनियों की बेधक आत्माओं का वास हो गया और उसमें अक्खड़पन आ गया। खाद बात पर वह तुरंग अपना मत प्रस्तुत करती है। मैत्रेयी जिद्दी, प्रयत्नशील और सहनशील भी है। साथ ही निडर भी है। सत्रह साल में ही शादी कर देने की बात माँ से करती है, नौकरी करने से इन्कार कर देती है। एक सुखी परिवार का स्वप्न देखनेवाली मैत्रेयी कुटुंबवत्सल है। शादी के बाद अपनी तीनों बेटियों को लाड-प्यार से पालकर उन्हें संस्कारित करना उनके कुटुंबवत्सल होने का प्रमाण देता है।

3. **साहसी** - मैत्रेयी साहसी है। माँ कस्तुरी का जीवनपट और जीवन संघर्ष उसने निडरता से आत्मकथा 'कस्तुरी कुंडल बसै' में उघाड दिया है। वह अपनी स्वाभाविक इच्छा को दबाना नहीं चाहती। इसलिए वह नौकरी करने के बजाए विवाह करना चाहती है। स्त्री-पुरुष संबंध को वह एक आवश्यकता मानती है। स्त्री-देह को अनुपस्थित माननेवाली अपनी माँ की 'फीमेल सेक्सुलिटी' बेदिक्कत पाठकों के सामने रखती है। स्त्री-देह को अनुपस्थित मानने के पाखंड के विरुद्‌ध यहाँ देह-चेतना का विमर्श भी उपस्थित किया है। वह पूरे साहस के साथ जीवन के अंतरंग प्रसंग को उजागर करती है। शादी से पहले साथी नंदकिशोर और अपने संबंधों को स्पष्ट करती है - "रात का समय और एकान्त कमरे में मैं और नन्दकिशोर।"[1] शादी के बाद भी अपनी आत्मकथा के दुसरे खंड 'गुडिया, भीतर गुडिया' में अपने पती के सामने विवाहपूर्व अपने प्रेमियों के बारे में चर्चा करनेवाली मैत्रेयी साहसीवृत्ती का परिचय देती है। शादी के बाद डॉ. सिद्‌धार्थ और राजेन्द्र यादव के साथ अपने सम्बन्धों को लगभग आत्महंता बेबाकी के साथ स्वीकार किया है। देह-विमर्श के बारे में अपने कहानी संग्रह 'गोमा हंसती है' (1998) की भूमिका में वह घोषणा कर चुकी हैं - "हमारा मन जो कहता है, पाँव जहाँ ले चलते हैं, इंद्रियाँ जिस सुख की आकांक्षा करती हैं, मनुष्य होने के नाते वे हमारे कुविचार-कुचेष्टाएँ नहीं, जन्मसिद्‌ध अधिकार हैं।"[2] इस तरह स्त्री जीवन में अपने अधिकारों को प्राप्त करे जो उसका नैसर्गिक हक है यह कहनेवाली मैत्रेयी का व्यक्तित्व साहसी है, जो निडरता का प्रमाण देता है।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 129.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'गोमा हँसती है', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 1998, पृ. भूमिका से।

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR.

4. गांव का आकर्षण - मैत्रेयी को अपने 'सिकुर्रा' गांव का आकर्षण बचपन से रहा है। माँ के पढ़ने जाने पर दादाजी मेवाराम और गांव की औरतों ने ही उसे प्यार-दुलार से संजोया था। शिक्षा के लिए गाँव छोडनेवाली मैत्रेयी को खेरापतीन दादी का 'चन्दना गाना' और कलावती चाची का 'ललमनियाँ' हमेशा गांव की तरफ आकर्षित करता रहा। 'एदला' जैसे रक्षक बने दोस्त उसे गांव की तरफ आकर्षित करते रहे। "मैत्रेयी सपने में देखे चम्पाराम, खेरापतीन दादी और कलावती चाची से अब भी उम्मीदे बाँध रखी थी। वह उनमें से किसी को भी जहाँ देखती, वहीं पास पहुँच जाती।"[1] गांव के आकर्षण के बारे में मैत्रेयी कहती है - "गाँव मेरा यथार्थ और नॉस्टाल्जिया दोनों है। खेत ही खेत। मैं ट्रेक्टर चला रही हूँ। चारा काट रही हूँ। मजदूरों से झगड रही हूँ। इसलिए न अलीगढ़, न दिल्ली मैं तो अपने गाँव की हूँ। यहाँ लोगों ने मुझे बदलना चाहा। कई बार पति का दबाव भी पड़ा कि पोशाक बदल लो, बालों का स्टाइल बदल लो। मैंने कहा, ये सब बदल भी लूँ तो मन कैसे बदलूँ? गाँव मेरे भीतर बैठा है।"[2] इस तरह जीवन के बीस बरस जिस गाँव में बीताये उस गांव का आकर्षण मैत्रेयी को आज भी है। आज भी मैत्रेयी अपनी खेती-बाड़ी खुद करती है, गाँव जाना उसका नित्यक्रम जैसा है।

5. उच्चनीचता, जातीभेद का विरोध - माँ कस्तुरी ने अपने जीवन में पाखंड और धर्मांधता को स्थान नहीं दिया था, परिणामस्वरूप मैत्रेयी पर भी वही संस्कार हुए। बचपन में कुर्मी जाति का दोस्त 'एदला' उसका रक्षक और हमदर्द रहा है। अपने प्रेमी शिवदयाल के निम्न जाति के होते टूटा प्यार उसे जिंदगी भर याद रहा। कॉलेज के समय बाड़े रहने आई मैत्रेयी बाड़े के लोगों का निम्न जाति के लोगों से किये जानेवाले व्यवहार के प्रति विद्रोह भावना निर्माण हो जाती है और वह 'दैनिक जागृति' नामक पत्र में जाति-पाती के विरुद्ध कविता लिखती है। उसे बाड़े के लोगों का कोपभाजन बनना पडता है -

"नगर एक दिन जाननेवाला है
कितना जोर बाँध रखा है अपनी बाजूओं में तूने
संडास के रास्ते ही सही आ तो गई आँगन तक,
और चढ़ती जाती है, छत पर,
कैसे छिपा पाएगा अब यह कि कोई और बाड़ा तुझे?"[3]

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 98.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरी साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 11.
3. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 176.

बाड़े के लोगों ने हंगामा मचाने पर वह बाड़ा छोडने के लिए तैयार हो गई थी, इसतरह भारतीय समाज में स्थित इस कुप्रथा का उसने अपने जीवन में विरोध ही किया है। समाज में स्थित कुप्रथाओं को नष्ट करने के लिये ही मेरा साहित्य साह्य करेगा यही भावना लेकर वह कहती है, मुक्तिबोध ने आखिर कहा था -

"जो है उससे बेहतर चाहिए
दुनिया को साफ करने के लिए मेहतर चाहिए।"

मेहतर यानी महत्तर। महत्तर यानी वह, जो ऐसा काम करता है, जो दूसरा नहीं कर सकता। मैत्रेयी का दर्जा समाज में भी महत्तर का है और साहित्य में भी। इस तरह आज के आधुनिक युग में स्त्री स्वतंत्रता, समाज में प्रचलित कुप्रथा (बाल-विवाह, विधवा विवाह, जाति-प्रथा), देह-विमर्श, स्त्री-विमर्श पर कोई लेखक खुलकर नहीं लिखता परंतु मैत्रेयी ऐसी लेखिका है जिसने निडरता से इन विषयों को समाज के सामने लाकर प्रामाणिकता से समाज के यथार्थ, सत्य को सामने लाने का साहस किया है। धर्म के बारे में वह कहती है - "कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म को मान सकता है और सारे धर्मों का छोर वहीं आकर जुड़ता है जहाँ लेखक अपनी कृति में मानवता से जुडता है।"[1] इस तरह मैत्रेयी 'मानवता' यह सबसे बड़ा धर्म मानती है।

6. **स्नेह की भूखी** - पितृछाया से वंचित और नौकरी के कारण माँ का मैत्रेयी को दूर रखना उसे प्यार-दुलार से वंचित रहना पडा। स्नेह की प्यासी मैत्रेयी को दादाजी मेवाराम से ज्यादा लगाव रहा। मैत्रेयी कहती है - "बचपन तो एकदम ठणठण है। माँ को आवाज देता बचपन आज भी भीतरी कानों से टकराता है।"[2] माँ-बाप के प्यार की कमी के कारण ही ज्यों कोई उसे स्नेह-प्यार देता उसके तरफ वह जल्दी आकर्षित होती है इसलिए उसने अपने जीवन में आये प्रेमियों को सहजता से स्वीकार किया दिखाई देता है। स्नेह की भूखी मैत्रेयी कहती है - "हाँ, ये स्वाभाविक है। पर मैं अगर अपनी बात करूँ तो अपने और पराए का कोई भेद नजर नहीं आता है। मुझे अपने बच्चे की तरह ही दूसरों के बच्चे भी उतने ही प्यारे लगते हैं। इसलिए कम से कम मेरे लिए निजता या सार्वजनिकता की कोई समस्या ही नहीं रह जाती है।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 151.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'कस्तुरी कुंडल बसै', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2000, पृ. 104.

मैं सच बताऊँ, मुझे प्यार लेना या देना (बडे या छोटे सभी के प्रति) इतना अच्छा लगता है कि यह प्रवृत्ति मेरे पूरे अस्तितत्व में समा गई है। ऐसा शायद इसलिए विकसित हुआ, क्योंकि मुझे बचपन में आवश्यक प्यार नहीं मिला।''[1] इस तरह बचपन में प्यार से वंचित रही मैत्रेयी अपना जीवन तो दुसरों के जीवन में सुख निर्माण करने के लिये बिताया दिखाई देता है।

7. **मानवता के प्रति प्रतिबद्‌ध** - 'गुडिया भीतर गुडिया' में मैत्रेयी के सांप्रदायिकता, सहिष्णूता संबंधी विचार स्पष्ट हुए है। दिल्ली के क्वार्टर में रहने आई मैत्रेयी, मुसलमान डॉक्टर अहमद की पत्नी इल्माना से दोस्ती करती है। बचपन से ही मानवता, सहिष्णुता के संस्कार पाई मैत्रेयी सांप्रदायिक दंगे-फसादों का विरोध करती है। मैत्रेयी कहती है - ''मेरे खयाल में सारे धर्मों का अपना-अपना साहित्य हैं। ईसाइयों की बाइबिल है। हमारा यानी हिंदुओं का रामायण-गीता है, मुसलमानों का कुरान है। इनमें कुछ कहानियाँ हैं। इनमें भी सृजन की बहुत सारी चीजें हैं। जीवन से संबंधित हर विधा उनमें मौजुद है। अगर हम अपने सृजनात्मक लेखन में उनका उपयोग करना चाहे, एक तो होता है उपयोग, एक होता है प्रयोग, तो हम उसकी अच्छी-अच्छी बातों का उपयोग करते हैं जो इस समाज का कल्याण कर सकें, जो इस समाज को आगे ले जा सके तो फिर उनको उसमें से निकालकर फिर अपनी दृष्टि से देखना।''[2] इस तरह लेखक किसी भी धर्म का क्यों न हो उसने 'मानवता धर्म' की स्थापना अपने साहित्य के माध्यम से करनी चाहिए यह विचार यहा मैत्रेयी के सहिष्णू स्वभाव का परिचय देता है।

8. **अभिनय कुशल** - मैत्रेयी के अंर्तबाह्य सौंदर्य के साथ-साथ उसमें एक कलाकार भी छिपा है, वह अभिनय कुशल है। बचपन से उसे अभिनय से लगाव रहा था, पर माँ ने कृष्ण जन्माष्टमी के समय नाटक में हिस्सा नहीं लेने दिया था। पर अपनी अधुरी इच्छा को उसने कॉलेज जीवन में पुरा किया; कॉलेज में खेले नाटक में उसने 'जहाँआरा' की भूमिका निभाई थी। ''जिसे कभी इत्मीमान से अपने घर की छत नसीब नहीं हुई, आज वह महलों की रानी कहला रही है।''[3] बाजबहादूर से बिछोह के संवाद ऐसे बोले थे कि उसके आँखों से आँसू की लडियाँ गिरने लगी थी और उसके अभिनय को देखकर दर्शकों में तालियाँ गूँज उठी थी।

---

1. सं. विजय बहादुर सिंह, 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2011, पृ. 74.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2011, पृ. 152.
3. मैत्रेयी पुष्पा, 'गुडिया भीतर गुडिया', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2008, पृ.124.

9. **अभिरूचि** - साहित्य लिखना, पढ़ना, पढ़ाना, दूसरों के विचारों को समझना, टीका-टिप्पणी करना, अच्छे-बुरे के बारे में स्पष्ट मत व्यक्त करना, मित्र-परिजन निर्माण करना. निसर्ग तथा मानव के अंत:सौंदर्य में झाँकना पसंद है। संयुक्त परिवार का माहोल पसंद आता है। खेती-बाडी में रूचि रखती है, गाँव में जाकर आज भी खेती संभाली है।

10. **यात्राएँ** - यात्रा करना पसंद है। लेखन से उब जाने पर यात्रा के लिये निकलकर तरोताजा होकर लौट आती है। साहित्यकार होने के नाते विचार-विमर्श, या सम्मान लेने बुलाया तो यात्रा करती है। इतिहास के बारे में उत्सुकता होने के कारण ऐतिहासिक स्थलों का भ्रमण करती रहती है।

11. **दिनचर्या** - सुबह के प्रारंभिक कार्य निपटाकर संगणक पर लेखन कार्य करती है। खान-पान के बाद आराम करती है। और सुबह-शाम घुमने जाती है। स्वास्थ को तंदुरुस्त रखने का प्रयास करती है। इसतरह स्नेह की भूखी, मिलनसार, नीडर, जिद्दी, दृढ संकल्पी मैत्रेयी का व्यक्तित्व उसकी माँ कस्तुरी का प्रतिरूप है। माँ कस्तुरी के नीडर स्वभाव के परिणाम स्वरूप मैत्रेयी धड़ेले से भारतीय समाज के स्त्री जीवन की सच्चाई समाज के सामने लाने में सफल हुई है।

1.14 लेखकीय व्यक्तित्व निर्माण के प्रेरणा स्त्रोत :-

1) स्वयंप्रेरित, 2) माँ कस्तुरी का व्यक्तित्व, 3) जीवनानुभव, 4) बेटियाँ, 5) राजेंद्र यादव जी का प्रोत्साहित करना, 6) अन्य विभूतियाँ ।

1. **स्वयंप्रेरित** - प्रत्येक रचनाकार के निर्माण, उसका जीवनानुभव, परिवेश, घटना-प्रसंग, व्यक्ती, परिस्थिती कारण बनती दिखाई देती है, जिससे रचना जन्म लेती है। मैत्रेयी के रचनाकार निर्माण में उसका बचपन और गांव का परिवेश कारण बना दिखाई देता है। मैत्रेयी को रचनाकार बनने की प्रेरणा के बारे में वह खुद कहती है - "मैं इस बिंदू पर सोचती हूँ, तब यादों की लंबी यात्रा करनी पड़ती है। वैसे तो मैंने 'गुडिया भीतर गुडिया' में लेखन की ओर आकर्षित होने, उत्साहित होने और इस रास्ते की ओर बढाने वाले अपने सहयोगियों के बारे में लिखा है, लेकिन मुझे लगता है, मेरा हर कदम जाने-अनजाने 'कुछ लिखने' की ओर ही उठता था। कविता पढ़ना तीसरी कक्षा से ही अच्छा लगने लगा। मैं चिठ्ठियाँ ऐसी लिखती थी कि उधार न पटाने वाले लोग भी माँ को घर बैठे ही खेती के लगान के पैसे दे जाते थे।

मुझे प्रेरणा से पहले अपनी कलम के प्रभाव ने आगे बढाया।''[1] मैत्रेयी के कलम के प्रभाव से गांव के लोग सहज सरल बनकर लगान देते थे जो मैत्रेयी को अपने कलमकारी पर विश्वास हो गया और यही विश्वास उसका प्रेरणास्थल बना दिखाई देता है।

गाँव में पली-बढ़ी मैत्रेयीको गाँव, वहाँ का परिवेश बनती-बिगडती घटनाओं से भी एक सृजनात्मक दृष्टी प्राप्त हो गई जो उसे लेखक बनने के लिये साहय्यभूत रही। मैत्रेयी कहती है - ''मेरा सब जीवन गाँव में बीता है। जैसे गाँव के बच्चे होते थे मैं वैसी ही थी। कभी-कभी मन नहीं लगता था। पाबंदियाँ उम्र के बढते लगने लगी तब मन अस्वस्थ रहने लगा। जब कोई प्रसंग या घटना मैं देखती थी तो मेरे अंदर एक कहानी चलती थी जो उस अन्याय का, अत्याचार का विरोध करती। उदा. अगर कोई स्त्री पुरुष द्वारा पीटी जा रही है, कोई किसान जमीदार के यहाँ लगान देने गया है इत्यादि। मेरे अंदर अस्वस्थता जगती उससे कहानी बनती-आप उसे सृजनात्मकता कह सकते हो।''[2] इस तरह लेखन की प्रेरणा मैत्रेयी की स्वयंप्रेरित तो थे ही लेकिन उसे बढावा दिया उसके गाँव के परिवेश, घटना-प्रसंगों ने जिससे अपने और गाँव के जीवन के भावविश्व को चित्रित करता कलम उसे एक निर्भय, नीडर लेखिका के रूप में प्रस्तुत करता है।

2. **माँ कस्तुरी का व्यक्तित्व** - मैत्रेयी पुष्पा के लेखकीय व्यक्तित्व निर्माण में उनका वंचित बचपन और अभावों से भरी किशोरावस्था की विपुल अनुभव संपदा का योगदान महत्त्वपूर्ण है, साथ ही माँ 'कस्तुरी' का जीवन पट प्रेरणादायी रहा है। माँ 'कस्तुरी' एक दबंग नारी थी। ''हौसले का नाम था कस्तुरी, जो हमारे स्त्रीवंश की अब तक सबसे ज्यादा ऊर्जावान, दूरदर्शी, गतीशील और प्रगतिगामी कडी साबित हुई।''[3] ऐसी साहसी माँ से टकराहट करते मैत्रेयी का व्यक्तित्व निर्माण हुआ। कस्तुरी प्रतिगामी विचारों की स्त्री थी, जीवन में आयी समस्याओं का समाधान वह खुद ढूंढ लेती थी। रूढी, परंपरा, धार्मिक आडंबर की विरोधी रही माँ कस्तुरी ने अपने जीवन में 'स्त्री शिक्षा' को अत्यंत महत्त्व दिया है। मैत्रेयी पढ़-लिखकर नौकरी प्राप्त करे यह उसकी मनषा थी। मैत्रेयी पढ़ने में मन लगाये इसके लिये वह बार-बार उसे समझाती, प्रेरित करती थी। मैत्रेयी अपनी माँ की महत्ता के बारे में कहती

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 48.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'गोमा हँसती है', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 1998, पृ. 8.
3. मैत्रेयी पुष्पा, 'गुडिया भीतर गुडिया', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2008, पृ. 128.

है - "इतने बृहत ऐसे विशाल और विस्तृत फलक पर सोचनेवाली माँ के सामने मैत्रेयी समुद्र और बूंदों के अनुपात में उपस्थित है।"[1]

माँ 'कस्तुरी' निडर, साहसी, हिम्मतवाली स्त्री थी जो गुण मैत्रेयी में आये इसी कारण तो वह साहसी और बारूद भरा लेखन कर पाई। लेखकीय साहस का श्रेय मैत्रेयी माँ को देती है - "इस साहस का श्रेय मैं अपनी माँ को दूँगी। मेरी माँ तो बहुत तेज थी, मुझसे भी तेज। एक बार मेरे दामाद मेरी बेटी से पूछते हैं कि क्या माताजी (मेरी माँ -- सब उन्हें हमारे घर में माताजी कहते थे।) मम्मी से भी तेज थीं? तो मेरी बेटी ने हँसकर कहा - 'हाँ'! मेरे दामाद बोले - 'बाप रे बाप! तु भी तुम सब भी ऐसी हो!"[2] इसतरह निडर, साहसी कस्तुरी के गुण बेटी मैत्रेयी और नातिनों में भी आ गये थे। कस्तुरी के विचारों से टकराहट करते ही मैत्रेयी का नीडर साहसी व्यक्तित्व निर्माण हुआ।

3. **जीवनानुभव** - गाँव में पली-बढ़ी मैत्रेयी ने माँ के जीवन-संघर्ष और अपने जीवन के कटू प्रसंगों, भारतीय समाज की स्त्री-यातनाओं को अनुभव किया था, बल्कि अपने गाँव के सामंती व्यवस्था में रचे-बसे मूल्यों से दबी स्त्री जीवन को देखा और अनुभव भी किया था। गाँव में घटती घटनाओं-प्रसंगों से वह झकझोर जाती, गाँव के स्त्री पर होने वाले अन्याय-अत्याचार के प्रति सजग रही मैत्रेयी ने गाँव के स्त्री जीवन को ही अपने साहित्य का विषय बनाया, वही उसकी प्रेरणा स्थल बनी दिखाई देती है। मैत्रेयी कहती है - "मेरा कोई विशिष्ट प्रेरणास्त्रोत नहीं है। गाँव के अनुभव ही मेरे प्रेरणास्त्रोत हैं। कभी गाँव के स्त्री को देखती तो मुझे उसके बारे में भिन्न प्रकार विचार सुझते। मेरे विचार थोडे-थोडे फणीश्वरनाथ रेणु से मिलते हैं। मैं गाँव के बिना लिख ही न पाती। मेरे दोस्त 'एदल्ला' को देखती तो अनेक विचार आते। कोई रचना पढ़ती तो दूसरे ही विचार मन में आ जाते हैं, और मैं रचना लिखने बैठ जाती हूँ। कोई विशिष्ट परिस्थितियाँ ही उसके लिए निर्माण हो ऐसी कोई बात नहीं थी। दृश्य देखती हूँ तभी तो रचना सूझती है।"[3] इस तरह मैत्रेयी ने एखाद विशिष्ट व्यक्ति, परिस्थिती को रचना का साहित्य नहीं बनाया बल्कि अपने जीवनानुभव और परिवेश को वह चित्रित करती रहती है, वही उसके लेखन में सहाय्यभूत भूमिका निभाते है।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'गोमा हँसती है', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 1998, पृ. 9.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 89.
3. मैत्रेयी पुष्पा, 'गोमा हँसती है', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 1998, पृ. 13.

4. बेटियों ने दी लेखन की प्रेरणा - बचपन से ही प्रभावशाली कलम की अधिकारी रही और कॉलेज जीवन में कविता लिखनेवाली मैत्रेयी ने शादी के बाद भी लेखन नहीं किया था परंतु बेटियों को पाठशाला में कथा, लेख लिखकर देनेवाली माँ को बेटियों ने देखा था। गृहस्थी में पचास साल बीता देने के बाद लडकियाँ बडी हो जाने पर पारिवारीक जिम्मेदारी से मुक्त हुई माँ को उनकी बेटियों ने लेखन के लिये प्रेरणा दी। मैत्रेयी कहती है - ''मेरे यहाँ उलटा हुआ है, बच्चों को डॉक्टर मैंने बनाया और मुझे लेखिका बच्चियों ने बनाया। हाँ, तो उन्होंने ही कहा, मम्मी! कविता लिखो, कहानी लिखो, कुछ भी लिखों। तो मैंने एक प्रेम-कहानी लिखी। फिर मैंने तीनों लडकियों को बारी-बारी पढवाई। उन्होंने कहा, मम्मी ने लिखी है, मम्मी ने लिखी है, पढी तीनों ने, बहुत बढिया है।''[1] इस तरह मैत्रेयी के तीनों लडकियों ने उन्हें लिखने के लिए प्रेरणा दी और अपने अंदर छिपे लेखकीय व्यक्तित्व को मैत्रेयी ने फिर एक बार जन्म दिया।

5. राजेंद्र यादव जी का लेखन कार्य के लिये प्रोत्साहन - मैत्रेयी के लेखकीय व्यक्तित्व निर्माण में जो विविध प्रेरणास्त्रोत है उनमें राजेंद्र यादव का स्थान महत्त्वपूर्ण है। मैत्रेयीअपनी पहली कहानी 'साप्ताहिक हिंदुस्थान' में दे आई थी, वह नहीं छपी। उसके बाद फिर एक कहानी लेकर वह राजेंद्र जी के पास चली गई जिसे उन्होंने छ बार लौटा दिया था, और सातवी बार उसे छपवा दिया। एक किसान पर लिखी -'जमीन अपनी-अपनी' यह कहानी प्रसिद्ध रही फिर मैत्रेयी ने आगे अपना लेखन कार्य निरंतर जारी रखा, परंतु उसे 'लेखक' बनाने में राजेंद्र यादव की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। मैत्रेयी कहती है - ''वह तो मैं भी मानती हूँ कि राजेंद्र यादव ने मेरे अनुभवों को सुनकर मुझे एक खास तरह की भावी लेखिका के रूप में देखा था। साथ ही उन्होंने मुझे उन किताबों की सूची देने का काम निरंतर किया, जो मेरा रचनात्मक मार्गदर्शन कर सकती थी। हाँ, मुझे लिखने का सलीका सिखाया। मंच से बोलने के लिए बाध्य किया।''[2] इसतरह राजेंद्र यादव जी के कारण ही मैत्रेयी का लेखकिय व्यक्तित्व ताश-खराशकर निर्माण हो गया। इसलिए मैत्रेयी राजेंद्र यादव जी को एक पिता की जगह देखती है ज्यो लडकी की गलती पर उसे माफ करके बार-बार सुधारने का मौंका देता है। राजेंद्र यादव जी ने भी 'पिता' का रोल निभाकर मैत्रेयी के व्यक्तित्व को निर्माण किया है।

---

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 59.
2. वही, पृ. 51.

इस तरह मैत्रेयी पुष्पा भारतीय गाँव के नारी का जीवन लेकर प्रकट हुई, जिस समय भारतीय समाज के साहित्य क्षेत्र में अस्तित्ववादी लेखन उभरकर सामने आ रहा था। मैत्रेयी ने अपने साहित्य संसार में अपने गाँव की स्त्री और उसकी कथा प्रस्तुत करना प्रारंभ किया, जिसमें भारतीय स्त्री के जैविक, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक धरातल पर अपने हक्क के लिये झगडती नारी का चित्रण प्रमुखता से रहा है। भारत के गाँव-अंचल की कहानी है। अपने साहित्य में प्रादेशिक रूप, आंचलिकता का चित्रण करना उसके साहित्य की विशेषता है, जो पाठक को फणीश्वरनाथ रेणू, रामदरश मिश्र, राजेंद्र अवस्थी, शानी, वृंदावनलाल वर्मा, गोविंद वल्लभ पंत, बलवंतसिंह, नागार्जुन, रांगेय राघव, जयसिंह, देवेंद्र सत्यार्थी आदि आंचलिक लेखन करनेवाले लेखकों की याद करा देता है।

2. **कृतित्व :-**

सदियों से चली भारतीय पुरुष व्यवस्था के संकेतों पर अपनी आंतरिक इच्छाओं को दबाकर कठपुतली की तरह नाचनेवाली स्त्री ने आज के विज्ञान युग, आधुनिक बोध से प्रेरित होकर शिक्षा ग्रहण कर अपने इच्छाओं और विचारों को व्यक्त करना प्रारंभ जरूर किया है। परंतु, नौकरी-पेशा करनेवाली, शिक्षा ग्रहण करने आज की आधुनिक स्त्री भी परंपरा से चले आये रिती-रिवाजों को तोड नहीं पाई है। पुरुष वर्चस्व और परंपरा के पाटों के बीच छटपटाने वाली आज की नारी पुरुष वर्ग से समान अधिकार माँगना चाहती है, चाहे वह गाँव की औरत हो या शहर की औरत। अपने जैविक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक अधिकार का हक माँगने वाली नारी का रूप निडरता से प्रस्तुत करने वाली मैत्रेयी पुष्पा प्रथम लेखिका है।

मैत्रेयी पुष्पा के लेखन के बारे में कृष्णा सोबती कहती है - ''स्वातंत्र्योत्तर भारतीय उपन्यास के हिंदी समय में मैत्रेयी पुष्पा द्‌वारा प्रस्तुत की गई ग्रामीण समाज की प्रखर अभिव्यक्ति विलक्षण कहलाने की अधिकारी है। जिस अनुभव और कौशल से मैत्रेयी ने देशज गतिविधियों का सामाजिक वृत्तांत बुना है वह आत्मसम्मोहन और आत्मपीड़क उपन्यासों के पाठ से उन्हें अलग खड़ा करता है। राष्ट्र के ग्रामीण जीवन से उभरती सामाजिक, राजनीतिक स्थितियाँ, पीढ़ियों और रुढ़ियों के द्‌वंद्‌वात्मक पैंतरे मैत्रेयी की लेखन की नई नागरिक चेतना को प्रमाणित करते है।''[1]

---

1. सं. विजय बहादुर सिंह, 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. भूमिका से।

इसतरह आज वैश्विकरण के समय में आधुनिक बोध से स्वअस्तित्व के लिये जगह निर्माण करनेवाली भारतीय ग्रामीण स्त्री छटपटाहट मैत्रेयी पुष्पा का लेखन है। वह खुद कहती है -"मैं लेखक या कुछ भी और होने से पहले एक स्त्री हूँ और मैं चूकि स्त्री होने के नाते स्त्री-मन व अनुभव से परिचित हूँ, इसलिए नारी के मन को समझने का दावा कर सकती हूँ।"[1]

इसतरह भारतीय गांव का नहीं तो स्त्री के गांव का चित्रण करने वाली मैत्रेयी ने अपने पहले कहानी संग्रह से ही बहुत चर्चित होकर हिंदी के वरिष्ठ रचनाकारों में शीर्षस्थ स्थान प्राप्त किया ऐसी लेखिका मैत्रेयी पुष्पा का रचना संसार निम्न प्रकार से है -

1.2 कृतित्व - पिछले शतक के अंतिम दशक की सशक्त महिला लेखिकाओं में जिन रचनाकारों ने अपनी अलग पहचान बनाई हैं, उनमें मैत्रेयी पुष्पा का नाम शीर्षस्थ है। उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा हिंदी साहित्य में अपनी अलग पहचान बनाते हुए, भारतीय ग्रामीण स्त्री का गांव पाठक के सामने प्रस्तुत किया है। उनका रचना संसार निम्न प्रकार से है -

1) उपन्यास, 2) कहानी, 3) आत्मकथा, 4) स्त्री-विमर्श, 5) नाटक, 6) कविता संग्रह, 7) टेलिफिल्म, 8) अन्य लेखन, 9) मेरे साक्षात्कार ।

2.1 1) उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पा - आज के समकालीन लेखिकाओं मैत्रेयी एक मात्र लेखिका रही है, जिन्होंने प्रेमचंद के समान ही अपने समय और समाज को इमानदारी से प्रस्तुत किया है। उनके उपन्यासों में चित्रित आंचलिक परिवेश हमें 'फणीश्वरनाथ रेणू' की याद दिलाते है, बल्कि मैत्रेयी को रेणू परंपरा का पहला आधुनिक अनुयायी सिद्ध करता है। मैत्रेयी पुष्पा के आज तक प्रकाशित हुए उपन्यास इस प्रकार है -

1. बेतवा बहती रही - प्रथम संस्करण 1994, किताबघर प्रकाशन
2. इदन्नमम् - प्रथम संस्करण 1999, द्वितीय संस्करण 2002, किताब घर प्रकाशन
3. चाक - प्रथम संस्करण 1997, द्वितीय संस्करण 1997, राजकमल प्रकाशन
4. अल्मा कबूतरी - प्रथम संस्करण 2000, द्वितीय संस्करण 2001, राजकमल प्रकाशन
5. विजन - प्रथम संस्करण 2002, वाणी प्रकाशन
6. झूला नट - प्रथम संस्करण 1999, राजकमल प्रकाशन

---

1. सं. विजय बहादुर सिंह , 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. 8.

7. अगिनपाखी - प्रथम संस्कक्षरण 2001, वाणी प्रकाशन
8. कही इसूरी फाग - प्रथम संस्करण 2004, राजकमल प्रकाशन
9. त्रिया हठ - प्रथम संस्करण 2006, किताबघर प्रकाशन
10. स्मृतिदंश -
11. माया-मृग -

'बेतबा बहती रही', 'इदन्नमम्', 'चाक', 'झूला नट', 'अल्मा कबूतरी', 'अगिनपाखी', 'कही इसूरी फाग' जैसे उपन्यास लिखकर मैत्रेयी पुष्पा ने प्रेमचंद के समान अपने समय और समाज को पूरी ईमानदारी से प्रस्तुत किया है। तो 'झूला नट' और 'अल्मा कबूतरी', 'इदन्नमम्' उपन्यास रेणू की याद दिलाते है, जिसमें आंचलिकता से बद्ध ग्रामीण जीवन सामने आता है।

मैत्रेयी के लेखन के बारे में राजेन्द्र यादव कहते हैं - ''रेणू के बाद, संजीव के साथ-साथ मैत्रेयी अकेली लेखिका है, जिसने सबसे अधिक चरित्र हिंदी साहित्य को दिए। मैत्रेयी का गाँव-कस्बे से संबंध आज भी बना हुआ है। यह गाँव जाकर लोगों से मिलती-जुलती है। यहाँ रांगेय राघव के लिए कहा गया एक वाक्य याद आ रहा है कि वे धुमकेतू की तरह हिंदी के आकाश पर उदित हुए। शायद मैत्रेयी का आगमन भी कुछ वैसा ही हुआ है। हिंदी साहित्य के घुटे और बंद वातावरण में मैत्रेयी का आना अचानक एक ऐसी दुनिया के दरवाजे खुल जाना है, जिसके पार फैला, जंगल, पशु-पक्षी, फूल-फसलें, सब कुछ दूर-दूर तक चला गया है। हाँ, वहाँ मोर-मैनाएँ हैं तो सियार-भेड़िए भी ---।''[1] इस तरह मैत्रेयी का साहित्य संसार उनकी अनुभव और प्रेरणा भूमि गाँव है जो प्रेमचंद के कथा-साहित्य की याद दिलाता है।

मैत्रेयी ने 'बेतवा बहती रही' से 'अगिनपाखी' उपन्यास तक गाँव का दामन नहीं छोडा इसलिए आलोचकों ने उन्हें गाँव की लेखिका के रूप में संबोधित किया। परंतु जनवरी 2002 ई. में प्रकाशित 'विजन' उपन्यास में लेखिका ने महानगर के माहौल को अभिव्यक्त करते हुए मेडिकल क्षेत्र को केंद्र बनाकर वहाँ के भ्रष्ट कारोबार को सामने लाया। शायद 'विजन' यह हिंदी का पहला उपन्यास है, जिसमें मेडिकल क्षेत्र को केंद्र बनाकर लिखा गया है। इस दृष्टि से 'विजन' उपन्यास मैत्रेयी के साहित्य यात्रा का नया पड़ाव माना जा सकता है, जो उन्हें सशक्त लेखिका के रूप में सामने लाता है।

---

1. सं. विजय बहादुर सिंह , 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. 60.

मैत्रेयी के उपन्यास की नायिका 'इदन्नमम' की 'मंदा', 'चाक' की 'सारंग', 'अल्मा कबूतरी' की 'अल्मा', 'झूला नट' की 'शीलो', 'अगिनपाखी' की 'भुवन' तथा 'विजन' की 'नेहा' और 'आभा' आदि सभी नारी पात्र अपने परिस्थितीगत गहरे करूणा भाव के साथ पाठकों के मन में गहराई तक उतर जाती है और भारतीय स्त्री-जीवन के बारे में सोचने के लिए मजबूर करती है। साथ ही बदलते राजनीति से लेकर उत्तर आधुनिक युग में गाँव की खेती-किसान के जीवन की विडंबनाओं को सशक्त चित्रण लेकर उभर आता है। जो पाठक मैत्रेयी के उपन्यास को पढ़कर आज के भारतीय ग्रामों की सामाजिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक त्रासदी से गुजरते ग्रामीण जीवन को देख सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि एक सफल उपन्यासकार के रूप में मैत्रेयी पुष्पा अधुनातन लेखकों में अग्रणी है।

2.2 2) कहानीकार मैत्रेयी पुष्पा - मैत्रेयी पुष्पा का कथा-साहित्य पढ़ने के बाद एक बात ध्यान में आती है कि मैत्रेयी की कथा नायिका आज के आधुनिक युग में भारतीय पुरुष समाज के सामने अपने अस्तित्व और अधिकार की लडाई लढने के लिये तैयार है। आज के गाँव की नारी अपनी अलग पहचान बनाना चाहती है।

मैत्रेयी के कथा-साहित्य के बारे में राजेन्द्र यादव जी कहते हैं - ''हिंदी साहित्य में पहली बार हुआ कि किसी महिला ने शुद्ध गाँव-कस्बे की कहानियाँ लिखीं। मैत्रेयी के पास ऐसे अनुभव थे, जिन पर मध्यमवर्गीय महिलाएँ सोच भी नहीं सकती थी। उन पीड़ित महिलाओं पर गहराई, संवेदना, समझ के साथ लगातार लिखने वाली पहली महिला लेखिका मैत्रेयी है। गाँव के जीवन और संघर्ष को केंद्र बनाकर ही उसकी कथा-रचनाएँ हैं।''[1]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से हिंदी जगत को अविस्मरणीय पात्र प्रदान किये है। राजेन्द्र यादव कहते है - ''प्रेमचंद ने भी गाँव पर लिखा, लेकिन उनके पास भी ऐसी सशक्त और विविध महिला पात्र नहीं हैं। यही नहीं मैत्रेयी ने गाँव के शब्दों, मुहावरों, रीति-रिवाजों, षड्यंत्रों, मरने-जीने को खास तौर से केंद्र बनाया।''[2]

---

1. सं. विजय बहादुर सिंह , 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. 57.
2. वही, पृ. 57.

इस तरह आज के वैश्विकीकरण के दौर में भारत देश का छटपटाता गाँव, वहाँ का लोकजीवन और भारतीय नारी का संघर्ष से भरा जीवन मैत्रेयी के कथा-साहित्य का केंद्र रहा है। उन्होंने निम्नलिखित कहानी संग्रह लिखे हैं -

1. चिन्हार - प्रथम संस्करण 1991, द्‌वितीय संस्करण 1999,

इस कहानी संग्रह में समाविष्ट कहानियाँ - 1) अपना-अपना आकाश, 2) बेटी, 3) सहचर, 4) बहेलिया, 5) मन नाँहि दस बीस, 6) हवा बदल चुकी है, 7) आक्षेप, 8) कृतज्ञ, 9) भँवर, 10) सफर के बीच, 11) केतकी, 12) चिन्हार ।

2. ललमनियाँ और अन्य कहानियाँ - प्रथम संस्करण, 1999

समाविष्ट कहानियाँ - 1) फैसला, 2) सिस्टर, 3) सेंध, 4) अब फूल नहीं खिलते, 5) रिजक, 6) बोझ, 7) पगला गयी है भगवती, 8) छाह, 9) तुम किसकी हो बिन्नी?, 10) ललमनियाँ।

3. गोमा हँसती है - प्रथम संस्करण 1998

समाविष्ट कहानियाँ - 1) शतरंज के खिलाडी, 2) राय प्रवीण, 3) बिछुडे हुए, 4) प्रेम भाई एण्ड पार्टी, 5) ताला खुला है पापा, 6) साँप सीढ़ी, 7) उज्रदारी, 8) रास, 9) बारहवी रात, 10) गोमा हँसती है।

मैत्रेयी की अनेक कहानियाँ पुरस्कार प्राप्त कर चुकी हैं। क्योंकि उन्होंने उपन्यास की तरह ताकतवर कहानियाँ हिंदी साहित्य को प्रदान की है। उनकी कहानियों में बिम्बों और दृश्यों को सजीव बना देने की अद्‌भूत ताकत है। जिन्हें पढ़कर पाठक कथा-रस अनुभव करता है, साथ ही साथ उनके पात्र दिलो-दिमाग पर छा जाते है। 'ललनमियाँ' की 'मौहरो', 'रिजक की 'लल्लन', 'पगला गई भगवती' की 'भागो', 'सिस्टर' की डोरोथी, 'तुम किस की हो बिन्नी?' की 'बिन्नी', 'बेटी' कहानी की 'मुन्नी', 'बिछुडे हुए' कहानी की 'चंदा' हो या 'छाँह' कहानी की 'बतासो' हो यह सब स्त्रियाँ अपने परिस्थितिगत गहरे करूणाभाव के साथ पाठक के मन-मस्तिष्क में गहराई तक उतर जाती है। मैत्रेयी ने इन नारी पात्रों के माध्यम से हिंदी कथा-साहित्य को अमर चरित्र प्रदान किये है, जो लेखिका के भाषा सामर्थ्य तथा गहरे चरित्र-बोध को सिद्‌ध करते है। इस तरह मैत्रेयी पुष्पा आज हिंदी साहित्य में एक सफल कहानीकार के रूप में सिद्‌ध हुई है।

2.3 आत्मकथाकार मैत्रेयी पुष्पा :-

मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी आत्मकथा दो खंडों में लिखी है - 1) 'कस्तुरी कुंडल बसै', 2) 'गुड़िया भीतर गुड़िया'। उन्होंने कहानी और उपन्यासों की तरह जानदार और ताकतवार आत्मकथा हिंदी साहित्य को दी है। लेखिका अपने आत्मकथा को 'आत्मकथात्मक उपन्यास' भी कहती है। अपने बचपन के जीवन संघर्ष को प्रथम खंड में चित्रित किया है, तो वैवाहिक जीवन के उतार-चढाव और अपने लेखिका बनने की कहानी को दुसरे खंड में चित्रित किया है।

2.3.1 'कस्तुरी कुंडल बसै' - 'कस्तुरी कुंडल बसै' मैत्रेयी की आत्मकथा से ज्यादा उसके माँ की जीवन-कथा है। उन्होंने इसमें अपने व्यक्तित्व को माँ के व्यक्तित्व में तलाशा है। इस आत्मकथा में उन्होंने माँ और बेटी के संबंध कई जटिलताओं युक्त रहे है जिसे दुसरे खंड में प्रस्तुत किया है।

इस प्रथम खंड में माँ 'कस्तुरी' और बेटी 'मैत्रेयी' के अंतर्द्वंद्व और टकराहट का चित्रण है। यह टकराहट एक विधवा स्त्री और कुंवारी बेटी के वैचारिक भिन्नता की टकराहट है। इसमें उन्होंने 'स्त्रीत्व' के नकार और स्वीकार का प्रश्न भी उठाया है, क्योंकि नारी मुक्ति की भिन्न चेतना का सवाल भी यहाँ उपस्थित किया है और उसके जबाब भी माँगे है। मैत्रेयी ने अंतरंग जीवन के सूत्र तलाशनेवालों के लिए अपनी आत्मकथा में कुछ भी गोपनीय नहीं छोडा है जिस कारण आज उसे 'तसलीमानसरीन' कहा जाने लगा है। उन्होंने अपने प्रेमियों के बारे में बेदिक्कत लिखा है। जैसे - नन्दकिशोर और अपने को एक कमरे में रहने की बात बेदिक्कत लिखती है। अपने कथा-साहित्य की तरह आत्मकथा में भी 'फीमेल सेक्सुलिटी' का विमर्श बिना लाग-लपेट के साथ उपस्थित किया है। उन्होंने अपने जीवन के बचपन से लेकर यौवन तक के अंतरंग के साथ बहिरंग के अनुभवों और घटनाओं को बेदिक्कत उघाडकर रखा है। वीरेंद्र यादव कहते है - "यहीं कारण है कि समस्त 'स्त्री-उत्पीडन' का पुरुषसत्ता के खाते में डालकर स्त्री बनाम पुरुष का विमर्श रचने के बजाय वे स्त्री दु:ख को अधिक संश्लिष्टता के साथ उजागर कर पाती हैं। एक आत्मकथा लेखिका के रूप में मैत्रेयी पुष्पा की सफलता यह भी है कि वे अपने जीवन के अंतरंग से लेकर बहिरंग तक के सारे अनुभवों व घटनाओं का निर्वैयक्तीकरण (डिपर्सनलाइज) करके उसे सामाजिक विमर्श में ढालती हैं।"[1]

1. सं. विजय बहादुर सिंह , 'मैत्रेयी पुष्पा : स्त्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र.सं.2011, पृ. 243.

इस तरह 'कस्तुरी कुंडल बसै' यह आत्मकथा माँ 'कस्तुरी' और बेटी 'मैत्रेयी' की आत्मकथा न होकर भारतीय समाज के स्त्री पक्ष को वाणी दी है जो सदियों से दबाई गई आवाज थी।

मैत्रेयी पुष्पा की 'कस्तुरी कुंडल बसै' यह आत्मकथा 2002 ई. में प्रकाशित हुई जिसमें जीवन के कटु अनुभव, समाज में स्त्री का स्थान, विवाह की समस्या, दहेज प्रथा, पैसों के लिए लडकियों को बेचना, विधवा समस्या, पुरुषों का वर्चस्व, शिक्षा क्षेत्र में अनैतिकता का व्यवहार, परितक्त्याओं की समस्या, स्त्री सबलीकरण आदि समस्याओं पर हल ढूंढना लेखकीय उद्देश्य रहा है। इस आत्मकथा का मनोवैज्ञानिक पक्ष एक सशक्त पक्ष के रूप में दिखाई देता है, क्योंकि स्त्री जीवन को प्रस्तुत करते समय लेखिका ने माँ और खुद के अनुभव पक्षों को चित्रित करके भारतीय स्त्री का भावविश्व पाठक के सामने प्रस्तुत किया है; जिससे यह आत्मकथा प्रशंसनीय हो गई है।

2.3.2 गुड़िया भीतर गुड़िया - हर स्त्री के अंदर एक दबी हुई आवाज रहती है, जिसे इस पुरुष व्यवस्था ने दबा रखा है। उसी स्त्री की आत्मा जागृत हो जाये तो खुले आसमान में पंख फैलाकर उडने की आकांक्षा वह रखती है। परंपराओं की बंदिनी बनी नारी वही नारी रीति-रिवाजों के बंधन तोडकर खुले आसमान में विहार करने निकल पड़ेगी, यही स्त्री का रूप मैत्रेयी के 'गुड़िया भीतर गुड़िया' इस आत्मकथा में दृष्टव्य होता है। पुरुष को स्त्री जाति का आधार माननेवाली मैत्रेयी को विवाह के बाद माँ 'कस्तुरी' की बाते आगे जाकर सच लगने लगती है। ''कौन थी वह जो धीरे-धीरे मुझे विवाह संस्था से विरक्त करती हुई --- मैं आस-पास देखती किस-किस ने तो मेरी दृष्टि बदली और दृष्टिकोण पलटकर रख दिया? शायद वह माँ थी जो परोक्षरूप से मेरा रास्ता परिवर्तनकारी लोगों की ओर ले गई।''[1]

माँ से खफा रहनेवाली मैत्रेयी को वैवाहिक जीवन के उतार-चढाव में खुद पर लगी पाबंदियों ने जागृत किया। गृहस्थी जीवन में बंदिस्त उसकी आत्मा, अंतर की चेतना उसे बार-बार फटकारने लगी, माँ की बाते याद आने लगी। परिणामस्वरूप; वह भी 'स्व' को ढूंढने की कोशिश में लगती जिससे पति उस पर शक करने लगे। उसके मन में एक सवाल खडा हुआ - ''यदि कोई पति अपनी पत्नी की कोमल भावनाओं को कुचलकर खत्म करता है तो पत्नी को पतिव्रत के नियमों का उल्लंघन हर हालत में करना होगा।''[2]

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'गुडिया भीतर गुडिया', राजकमल प्रकाशन, प्र.सं. 2008, पृ. निवेदन से।
2. वही, पृ. 15.

अपनी आत्मा की आवाज सुनकर जागी मैत्रेयी ने 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में सच्चाई के साथ अपने वैवाहिक जीवन के उतार-चढ़ाव को पेश किया है। वैवाहिक जीवन की सच्चाई को बिच बचाकर कुछ लिखा नहीं, तो अक्सर लक्ष्मण रेखाओं को लाँघ जाने का खतरा भी उठाया है। वह बेदिक्कत डॉ. सिद्धार्थ और राजेन्द्र यादव के साथ अपने सम्बन्धों को पेश करती है। पति के साथ हम कितने ही सहृदयता से, मित्रत्व से रहे वह कभी मित्र नहीं हो सकता वह 'मालिक' ही बना रहता है। पतिव्रता बनकर जीनेवाली मैत्रेयी ने इस सत्य को समझ लिया और वह खुद का रास्ता ढूंढने के लिये निकल पडी। पत्नी के साहित्यिक रूप को देखकर पती खुश तो होते थे, परंतु उसका मुक्त चिंतन उन्हें पसंद नहीं आता था। मैत्रेयी के बेझिझक वैवाहिक जीवन के पट को खोलने के बारे में राजकिशोर कहते है - '' 'गुड़िया भीतर गुड़िया' का सारभूत निष्कर्ष भी यही है - स्त्री पुरुष समाज की निजी संपत्ति है। लेखिका ने अगर तन-मन-कर्म से इस रूढि का प्रतिवाद करने का जोखिम नहीं उठाया होता, तो यह सर्वथा पठनीय पुस्तक लिखी ही न जाती।''[1]

वैवाहिक जीवन की सत्यता के साथ-साथ 'गुड़िया भीतर गुड़िया' में उन्होंने अपने साहित्यकार बनने के होड को चित्रित किया है। बेटी नम्रता से प्रेरणा लेकर अपने अंदर की लेखिका को जागृत कर कहानी लिखकर पति से छुपकर अपना साहित्य पत्र-पत्रिकाओं में छपकर आये इसलिए प्रयत्नशील मैत्रेयी का जिद्दी रूप सामने आता है। राजेन्द्र यादव जी कि ओर से कहानी लौटाने पर उसे सात बार फिर से लिखनेवाली वह एक जिद्दी लेखिका है, जिसने अपने गाँव के जीवन और अनुभवों को अपने कहानियों की सामग्री बना दिया था। इस तरह अपने स्त्री का गाँव सामने लेकर आनेवाली इस ढिट लेखिका के बारे में बंगाली बाबू कहते है - ''यातनाओं के मार्मिक वर्णन करना एक बात है, मगर उस यातना से सामना करने के बाद मनुष्यता बरकरार रख पाना संघर्ष के रास्ते पर चलना है।''[2] बंगाली बाबू का यह कहना मैत्रेयी पर ठिकही लागू होता है, क्योंकि उन्होंने 'गुड़िया भीतर गुड़िया' हो या उनका पूरा साहित्य हो जिसमें खुद के संघर्ष के साथ भारतीय स्त्री जीवन के संघर्ष को रेखांकित करते हुए उसमें जो रास्ता निकालने का सफल प्रयत्न किया है, वह आज के नारी के लिये एक उपहार है, जो अपने आप को मुक्त करना चाहती है, अपना अस्तित्व निर्माण करना चाहती है।

---

1. सं. विजय बहादुर सिंह, 'मैत्रेयी पुष्पा : स्मत्री होने की कथा', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2011, पृ. 270.
2. मैत्रेयी पुष्पा, 'गुडिया भीतर गुडिया', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2008, पृ. 190.

इस तरह मैत्रेयी पुष्पा के आत्मकथा का प्रथम खंड 'कस्तुरी कुंडल बसै' उसके संघर्षपूर्ण जीवन का दस्तावेज है और 'माँ कस्तुरी' के आधुनिक भारतीय नारी बनने की क्रिया की कहानी है। तो आत्मकथा का दुसरा खंड 'गुड़िया भीतर गुड़िया' परंपरागत अनुचित जीवन मूल्यों को अस्वीकृत कर नए मूल्यों के निर्माण के लिए प्रयत्नशील रही नारी की कहानी है।

2.4 स्त्री-विमर्श :-

स्त्री-विमर्श से संबंधित मैत्रेयी की दो किताबे बहुत प्रसिद्ध रही है - 1) खुली खिडकियाँ, 2) मालिक सुनो। मैत्रेयी का बचपन गाँव में बीता सम्भवत: इसलिए मैत्रेयी की अधिकांश नायिका रचनाओं में ग्रामीण परिवेश जीती हुई गाँव की स्त्री जीवन में समस्याओं को सामने लाती है। सच मायने में हिंदी साहित्य में पहली बार मैत्रेयी ने शुद्ध गाँव कस्बे की स्त्री जीवन के संघर्ष को अपने रचनाओं में स्थान दिया है। मैत्रेयी के 'स्त्री-विमर्श' में तीन आयाम प्रमुखता से प्रस्तुत होते है - 1) पुरुषों का अनुकरण, 2) पुरुषों द्वारा निर्मित मूल्यों का विरोध, 3) आत्मपरीक्षण करते हुऐ अपने अर्न्तविरोधों को समझते हुए अपने इच्छाओं, विचारों को समाज के सामने व्यक्त करना। स्त्री मुक्ति के बारे में मैत्रेयी कहती है - "देह हो या मन। ये स्त्री-पुरुष के अपने निजी होते हैं, यह बात स्त्री जिस दिन एलानिया तौर पर बयाँ कर देगी उस दिन सामंती समाज की चूलें हिल उठेंगी। लेकिन आज भी औरत डर रही है। पढ़ी लिखी पतिव्रताओं को करवाचौथ जैसे तमाम व्रत करते हुए अपनी वफादारी का लाइसेंस हर साल रिन्यू करना पड़ता है, ताकि विवाह संस्था उन्हें वैधता दिए रहे। जब तक औरत ऐसे कर्मकांडों से छुटकारा नहीं पाएगी, उन्हें किसी दूसरी तरह का स्पेस नहीं मिलेगा।"[1]

इस तरह 'सुनो मालिक सुनो' और 'खुली खिडकियाँ' इन किताबों में स्त्री को मानवता की धरातल पर देखा जाये इस विचार को प्रस्तुत किया है।

2.5 नाटक :-

'इदन्नमम' इस उपन्यास के आधार पर साँग एड ड्रामा डिवीजन द्वारा निर्मित छायाचित्र 'संक्रांति' के निर्माण के साथ-साथ 'मंदाक्रांता' नाटक का निर्माण किया गया। 'इदन्नमम' की नायिका 'मंदा' ही नाटक की प्रमुख नायिका के भूमिका में है, जो अपने गाँव सोनपुरा को सोने जैसा बनाने के लिए प्रयत्नशील है। उस गाँव के सामाजिक, आर्थिक,

1. मैत्रेयी पुष्पा, 'मेरे साक्षात्कार', किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्र. सं. 2010, पृ. 79.

16811

राजनीतिक प्रश्नों-समस्याओं को लेकर झगडनेवाली मंदा को अंत तक साह्य करने वाला सहनायक मकरंद दिखाया है। जो डॉक्टर बनकर सोनपुरा आकर मंदा के कार्य में सहकार्य करता है। इसतरह 'इदन्नमम्' का सफल मंचन 'मंदाक्रांता' नाटक है।

2.6 कविता संग्रह :-

'लकीरें' नाम का काव्यसंग्रह मैत्रेयी जी ने हिंदी साहित्य को प्रदान किया है। मैत्रेयी ने अपने कॉलेज जीवन से ही कविता लिखना प्रारंभ किया था और उसका प्रेरणा स्थल क्लासफेलो प्रेमी था। मैत्रेयी को खुद लिखी कविता अच्छी नहीं लगी थी। कॉलेज के टीचर भगवानदास माहौर जी ने उसे कविता लेखन के लिये प्रेरणा दी थी। परंतु लेखिका का झुकाव कहानियाँ लिखने की ओर रहा दिखाई देता है, जो उन्होंने 'लकीरे' नाम का एकही काव्य संग्रह लिखा है।

2.7 टेलिफिल्म :-

'फैसला' कहानी पर 'वसुमती की चिठ्ठी' टेलिफिल्म निकली जिसमें गाँव के स्त्री का राजनीति में निर्णय लेना इस बदलाव को चित्रित किया है। इसके साथ-साथ 'इदन्नमम्' उपन्यास पर 'संक्रांति' छायाचित्र बन गया है। साथ ही मैत्रेयी के आत्मकथा का प्रथम खंड 'कस्तुरी कुंडल बसै' पर टेलिव्हीजन पर धारावाहिक भी निकाली गई है।

2.8 अन्य लेखन :-

मैत्रेयी आज हिंदी के अनेक पत्र-पत्रिकाओं में स्वतंत्र लेखन कर रही है। 'हंस', 'आलोचना' जैसी प्रसिद्ध पत्रिकाओं में उनका साहित्य लगातार प्रसिद्ध होता है। इसके साथ-साथ स्वतंत्र कहानी लेखन, आलोचनाएँ, टिप्पणी, वैचारिक बहस, लेख तथा संगोष्ठियों के लिए प्रपत्र लिखती है।

2.9 पुरस्कार :-

1. हिंदी अकादमी द्वारा 'साहित्य कृति सम्मान'।
2. फैसला कहानी पर 'कथा पुरस्कार'।
3. 'बेतवा बहती रही' को 'प्रेमचंद सम्मान', 1995 उत्तर प्रदेश साहित्य संस्थान द्वारा।
4. हिंदी अकादमी के द्वारा 'साहित्यिक सम्मान' 1996-97।

5. 'इदन्मनमम' उपन्यास को - 'नंजनागुडू तिरुमालम्बा पुरस्कार' शाश्वती संस्था, बैंगलोर, 'प्रेमचंद सम्मान', उ. प्र. साहित्य संस्थान, 'वीर सिंहदेव पुरस्कार' मध्यप्रदेश साहित्य परिषद।
6. सार्क लिट्रेरी अवार्ड।
7. 'द हंगर प्रोजेक्ट', 'पंचायत राज' का।
8. सरोजिनी नायडू पुरस्कार।
9. अन्य कई पुरस्कारों से सम्मानित।

निष्कर्ष :-

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल के बहुमुखी प्रतिभासंपन्न लेखिका के रूप में मैत्रेयी पुष्पा का व्यक्तित्व एवं कृतित्व असाधारण है। गाँव में बचपन बीताई और स्त्री जीवन के संघर्ष को देखी और अनुभव की हुई मैत्रेयी का सारा साहित्य परंपरागत मान्यताओं, धारणाओं और नैतिकता के नियमों को नकारनेवाली स्त्री का चित्रण करते हुए, आज के वैश्वीकीकरण के दौर में स्त्री को एक वस्तु के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है; तो दूसरी तरफ गाँव की स्त्री आज भी अपने अधिकारों के लिये संघर्ष रत है। उस स्त्री को मुक्त करना, उसे अपने अधिकार के लिये संघर्षरत रखना, सजग बनाना यही मैत्रेयी के साहित्य-संसार का उद्देश्य रहा दिखाई देता है।

आज की नारी अपने व्यक्तित्व की रक्षा करते हुए, आर्थिक आत्मनिर्भरता, शिक्षा, सामाजिक जागृति-परिवेशगत परिवर्तन के लिये सजग हुई है; उसे अपना 'स्पेस' निर्माण करने के लिये जगह दे दी जायेगी तो वह समाज के कल्याण के लिये ही अपना जीवन समर्पित करती है यही विचार मैत्रेयी ने अपने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किये है।

इस तरह कहा जा सकता है कि आज की स्त्री को अपनी पहचान बना देनेवाला साहित्य मैत्रेयी पुष्पा का साहित्य है। परिणामस्वरूप: आज मैत्रेयी पुष्पा समकालीन हिंदी साहित्य साहित्यिकों में अग्रणी स्थान बनाने में सफल हुई है।

----- -----